CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वर्ष - 2 अंक -1 जनवरी 2010

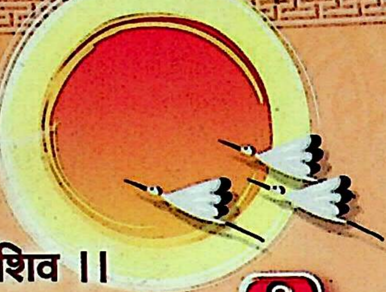

॥ श्रीः ॐ शिव ॥

पीयूष वल्ली

ज्ञान, कर्म, भक्ति सम्बन्धी त्रैमासिक

जन्म-महोत्सव विशेषांक

ॐ

आदि सम्पादक :
अनन्त श्री विभूषित स्वरूपस्थ आचार्य
डॉ0 रामानन्द शास्त्री 'आनन्द'
एम.ए. (ट्रीपल) आचार्य, साहित्यरत्न, साहित्यालंकार आदि

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पीयूष-वल्ली : वर्ष-2, अंक : 1, जनवरी 2010

स्वामी महेश्वरानन्द ... राजगुरु मठ, वा० श्री 3/175, शिवाला घाट, वाराणसी - 221001
92½

RNI No. : BIHHIN04897/04/1/2009 TC

॥ श्रीः ॐ शिवः ॥

पीयूष-वल्ली

(ज्ञान, कर्म, भक्ति सम्बन्धी त्रैमासिक)

"जन्म-महोत्सव विशेषांक"

आदि सम्पादक :
अनन्त श्री विभूषित स्वरूपस्थ आचार्य
डा० रामानन्द शास्त्री 'आनन्द'
एम० ए० (ट्रीपल) आचार्य, साहित्यरत्न, साहित्यालंकार आदि
आनन्द नगर, आनन्द रोड, सिवान (बिहार)

प्रधान सम्पादक :
श्रीमती चन्द्रबाला देवी, आश्रम माता

सम्पादक मंडल :
१. डा० रामायण उपाध्याय
२. आचार्य श्याम नारायण झा

सहयोग राशि- 10/- रूपये मात्र ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्रबन्ध सम्पादक :

१. श्री मधुमंगल राय, प्राक् मुख्य अभियन्ता
२. आचार्य श्याम नारायण झा, प्राक् शिक्षक

परामर्शदातृ-मंडल :

१. श्री मार्कण्डेय पाण्डेय, अवकाश प्राप्त जिला न्यायाधीश (उ०प्र०)
२. श्री कामता भक्त, प्राक् उप डाक निदेशक, पटना (बिहार)
३. डा० श्रीमती प्रेमलता सिन्हा, रा० भ० यो० बेतिया (बिहार)

संरक्षक :

१. श्री सूर्य नारायण मिश्र, F.R.C.S.
पूर्व विभागाध्यक्ष (शल्य), P.M.C.H., पटना
२. राजाराम गुप्ता, मीरगंज (गोपालगंज)

प्रूफ रीडर :

१. राम लगन शर्मा, पूर्व कार्यपालक अभियन्ता
२. विन्दा प्र० सिंह, पूर्व शिक्षक
३. श्री कृष्ण कुमार मिश्र, 'प्रभाकर' प्राक् अध्यापक

प्रकाशक :

आश्रम माता
प्रधान सम्पादक, पीयूष वल्ली
रामानन्द भक्तियोगाश्रम
आनन्द नगर, आनन्द रोड, सिवान (बिहार)

मूल्य : 10/- रूपये

मुद्रक : *कुमार प्रिन्टर्स*
लाह बाजार, छपरा

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

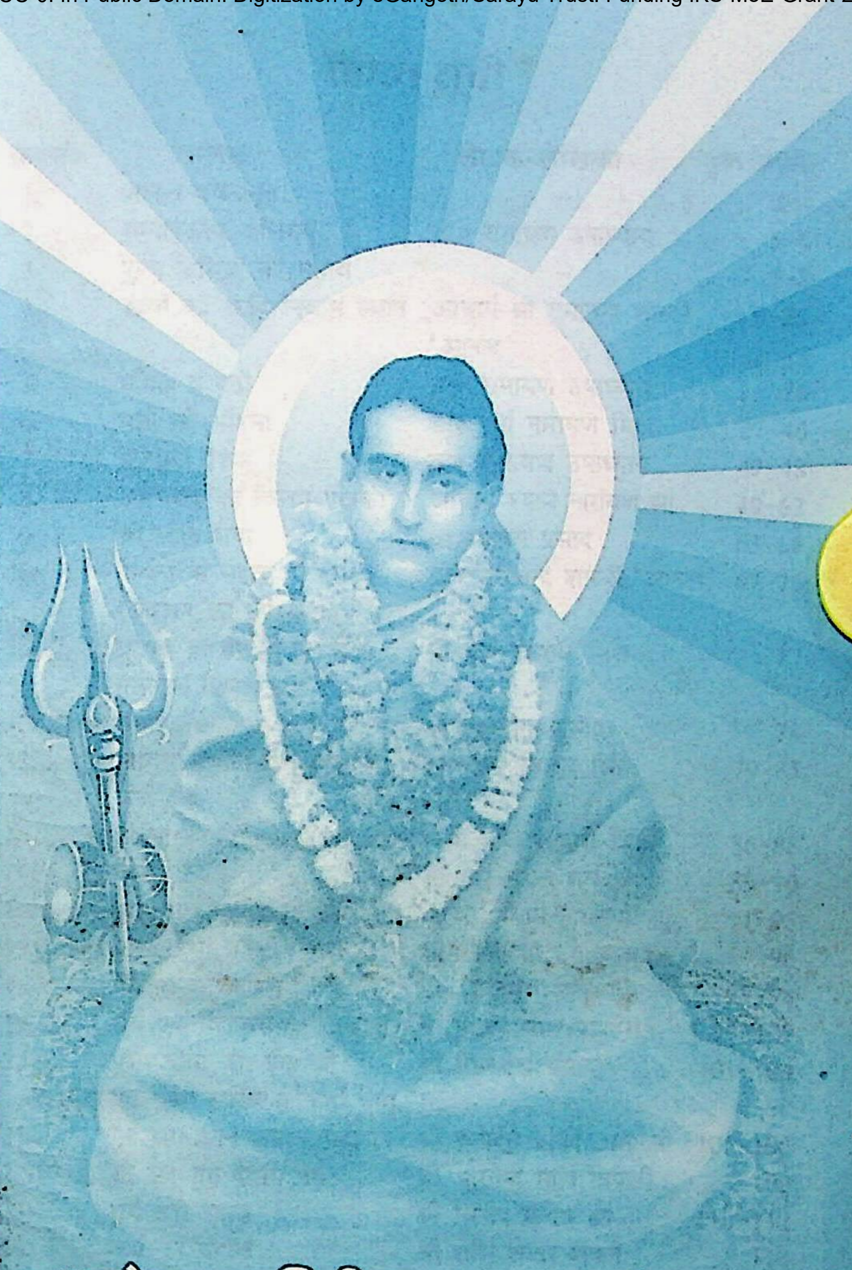

॥ केवलायाद्वितीयाय परमात्मने ॥

॥ श्री रामानन्दनाथाय नमः ॥

KUMAR OFFSET, CHAPRA

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

विषय सूची

क्र०सं०	आलेख	लेखक-लेखिका	पृष्ठ संख्या
1.	आनन्द वचनामृत	–	3-4
2.	सम्पादकीय अभिमत	डा० रामायण उपाध्याय	5-6
3.	पुण्य तिथियों का महत्व	–	7-8
4.	आर्यो का आदि निवास स्थान	आचार्य श्री रामानन्द शास्त्री 'आनन्द'	9-25
5.	माँगता हूँ यही	डा० रामायण उपाध्याय	26
6.	यज्ञों की महिमा	डा० सूर्य नारायण मिश्र	27-46
7.	पतिव्रता वेश्या	डा० रामायण उपाध्याय	47-48
8.	अद्वैतवाद का विजय पताका	आचार्य श्याम नारायण झा	49-62
9.	श्री सीता मैया	श्री धनञ्जय प्रसाद	63-66
10.	प्रार्थना के महत्व (प्रवचन का टेप अंश)	डा० रामानन्द शास्त्री 'आनन्द'	67-76
11.	गुरुदेव के हर विधान में कल्याण छिपा रहता है।	श्री बृज किशोर मिश्र	77
12.	बधाई	श्री विजयेन्द्र प्रसाद	78
13.	विविध गणान्त दोष तथा कूज दोष	डा० राम विचार सिंह	79-85
14.	Shelter of Saints (संत शरण)	श्री बाँके बिहारी सिंह	86-88
15.	मैं हूँ	श्री मधु मंगल राय	89-90
16.	कुछ क्षण गुरुदेव के साथ	आचार्य श्याम नारायण झा	91-95
17.	जन्म कथा	श्रीमती विभा उपाध्याय	96
18.	पराजय का कारण	डा० रामायण उपाध्याय	97-98
19.	धैर्य एवं विश्वास	श्री विजय नाथ पाण्डेय	99-100
20.	पूज्य बाबा जी, ईया जी एवं पुण्य स्थली कौवाहाँ धाम	श्री विजयेन्द्र प्रसाद	101-104
21.	गुरु सम कौन कृपालु महाना	श्री जनार्दन प्रसाद, वनारसी	105-108
22.	श्री सद् गुरु देवाय नमः	श्री भारतेन्दु मणि त्रिपाठी	109
23.	धर्म और शास्त्र	श्री विनोद कुमार झा	110-112
24.	कर्म का महत्व	श्री शशि शेखर शुक्ल	113
25.	पहचान	श्री विजय नाथ पाण्डेय	114
26.	श्री गणेश सदा सहाय	श्री ओम प्रकाश 'केजरीवाल'	115-117
27.	गुटखा	श्री पुरुषोत्तम कुमार झा से प्राप्त	118
28.	भजन	श्री आनन्द	119-120

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

श्री गुरवे नमः

पाठकों के नाम पत्र

मेरे आत्म स्वरूप,

बहुत-बहुत प्यार ।

समय ने सहयोग किया । यह पीयूषवल्ली (वर्ष 2 अंक 1, प्रारम्भ से 115) आपके समक्ष समुपस्थित हो गई । आपने गतांकों का सश्रद्ध स्वागत किया है, एतदर्थ साधुवाद । यह 'पत्रम से पुष्पम की ओर' बढ़ती, फल का रसास्वादन कराती हुई आप पाठकों को प्रसन्न करे तो सम्पादक मण्डल अपने को कृतकृत्य समझेगा ।

यह अमृत लता बराबर अपने में से निगमागम के अनुसार तथा क्वचिदन्यतोऽपि (साधकों की अनुभूतियों से) कुछ-न-कुछ देती रहेगी - ऐसा विश्वास है ।

इस अंक का प्रधान लेख पूज्य श्री गुरुदेव लिखित "आर्यों का आदि निवास स्थान" शीर्षक से प्रस्तुत है । साथ ही श्री गुरुदेव का "प्रार्थना के महत्त्व" पर टेप किया हुआ एक दुर्लभ प्रवचन भी भक्तों के लाभार्थ विशेष रूप से दिया जा रहा है ।

आश्रम माता : श्रीमती चन्द्रबाला देवी
(सम्पादक)

अपि च -

इस अंक के प्रकाशन में अधोलिखित भक्तों का सक्रिय सहयोग प्रशंसनीय है ।

1.	श्री पारस नाथ झा, टिकौली	-	500 रु०
2.	श्री ओमप्रकाश देव, समस्तीपुर	-	500 रु०
3.	श्री विरेन्द्र कुमार मिश्र	-	600 रु०
4.	श्री दयानन्द द्विवेदी, मुजफ्फरपुर	-	400 रु०
5.	श्री विनायक प्रसाद इंजीनियर	-	500 रु०
6.	श्री मनोज कुमार सिंह (पत्रिका मूल्य)	-	500 रु०
7.	डा० रमण प्रसाद (पत्रिका मूल्य)	-	600 रु०
8.	वैरिष्टर तिवारी (पत्रिका मूल्य)	-	1000 रु०
9.	कुमार प्रेस, छपरा (फोटो)	-	400 रु०
10.	लाकेट	-	100 रु०
11.	पत्रिका सहयोग राशि	-	2700 रु०
12.	मुख पृष्ठ (वाराणसी भक्तगण)	-	1500 रु०
	कुल - नौ हजार तीन सौ रुपये मात्र		9300 रु०

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

आनन्द-वचनामृत

1. जो मनुष्य आप अपने मन पर विजय प्राप्त करना चाहता है, उसे किसी भी व्यक्ति में आसक्ति नहीं रखनी चाहिए ।
2. आसक्ति सभी बन्धनों की जड़ है और वह बन्धन दुःखमय होता है । यही कारण है कि साधक को दुःखोन्मुक्त होने के लिए आसक्ति रहित होने का सदुपदेश दिया गया है ।
3. जो जितना ही अहंकारी है वह उतना ही ईश्वर से दूर है । अहंकार ईश्वर का स्वभाव नहीं, स्वभाव का विकार है जिसे सांख्य दर्शन भी स्वीकार करता है ।
4. घास पर गिरने वाली बूंदे भी मोती के सुन्दर गुच्छों के समान लगती हैं फिर भी वे बूंदे किसी के गले का हार नहीं बन सकतीं । बूंदे सूख जाती हैं और घास पशुओं के चरने के ही काम आती है । इसका मतलब यह है कि सौंदर्य बाहरी वस्तु है । जीवन का उपयोगी होना ही वास्तविकता है और वही श्रेष्ठ सुन्दरता है ।
5. मोथा एक घास है, उसे यदि ठीक से उखाड़कर न फेंका जाय तो वह तुरत पनप जाती है । वैसे ही अगर कुसंस्कारों को ढकने मात्र की चेष्टा की जाय तो वह पुनः पनप कर मन को बुरे रास्तों पर बहा देते हैं ।
6. जब कभी तुम ट्रेन में बैठते होगे और डब्बे से बाहर मुँह निकालते होगे तो निश्चय ही आँखों में छाई पड़ जाती होगी; तो समझो तो सही कि सत् कर्मों की रेलगाड़ी में बैठकर बाहर दुष्कर्मों की ओर आँखें फैलाने पर दौर्भाग्य की छाई से कब तक बच सकते हो ?
7. ऐ कविवर इन हँसने वाले फूलों से तो पूछो क्या इन्हें भावी मुरझाने वाले जीवन की चिन्ता नहीं रहती ? यदि नहीं तो इनसे इसकी शिक्षा ग्रहण करो कि प्रत्येक परिस्थिति में प्रसन्न रहना अपने को महान् बनाना है ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

8. जहाँ स्वच्छता अधिक रहती है, वहाँ लक्ष्मी का निवास रहा करता है। जहाँ गन्दगी अधिक रहती है, वहाँ दरिद्रता का निवास रहता है ।

9. भोजन के समय इष्टदेव को छोड़कर दूसरे प्रकार के चिन्तन करने वाले की ऑंत एवं मस्तिष्क दोनों दुर्बल हो जाते हैं ।

10. जो मनुष्य रात में अधिक खाकर सोता है उसे गाढ़ी नींद नहीं आती उसकी रात का समय अपना न होकर सपना का हो जाता है ।

12. जिस व्यक्ति को कोई भी अपनापन के ख्याल से डॉटने-फटकारने वाला नहीं रहता, उससे बढ़कर अभागा शायद ही कोई होगा ।

13. जिसने परमेश्वर को, आप अपने को, समर्पित कर दिया है उसे किसी सांसारिक सहायता की चिन्ता नहीं करनी पड़ती । वह यदि कर्म से विमुख नहीं है तो परमेश्वर उसकी सब व्यवस्था कर देता है ।

14. तुम जीवन में अनुभव करके देखोगे कि संसार का निकट-से-निकट व्यक्ति भी तुम्हारा नहीं है ।

15. अपना वही है जो सबका अपना है- जिसे परमेश्वर, दीनानाथ, दीनबन्धु, जगन्नाथ आदि नामों से पुकारते हैं ।

16. भूखे को अन्न और प्यासे को जल देने के समान धर्म कम ही हैं ।

17. प्रभु में समर्पण की कमी ही तुम्हारे सभी दुःखों की जननी है ।

18. साधकों को जिस किसी प्रकार अभ्यान्तर शत्रुओं (काम, क्रोधादि) के प्रहार से बचने का प्रयत्न करना चाहिए । उसी तरह निद्रा, आलस्य आदि से भी बचने की चेष्टा करनी चाहिए । इससे न केवल साधना में हानि होती है; प्रत्युत् व्यवहार क्षेत्र में भी असफलता का साथ होने लगता है ।

19. जब तुम शय्या त्याग करते हो तब और जब तुम सोने जाते हो तब दोनों ही समय अपने कल की रात तथा आज के कार्यों की समीक्षा करो और निर्णय कर लो कि तुम कितनी दूर आगे आ गये हो बीते दिन से । इसी चिन्तन पर तुम्हारी आज तक की प्रगति निर्भर करती है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ऊँ नमो रामानन्दाय ।

संपादकीय अभिमत

आज श्री श्री 1008 गुरुदेव जी की जन्मतिथि है मोक्षदा एकादशी । विचित्र संयोग है, आज ही वह दिन भी है जब भगवान कृष्ण ने अर्जुन के बहाने समग्र माया-पीड़ित संसार को गीता की देशना प्रदान की थी । जिस देशना का फल ही है कि मनुष्य आत्म ज्ञान (अपने को ही जान लेना) प्राप्त कर ले और बेकार के दु:ख सुखों के झगड़े से उबर जाय । आनन्द ही है वह, यह अनुभव कर ले ।

लगता है, गीता और कृष्ण एक ही हैं, परमब्रह्म के सगुण-साकार रूप तो श्रीकृष्ण हैं और उनकी वाङ्मयी मूर्त्ति गीता है । गुरुदेव जी - गीता ओर कृष्ण के, इस कलियुग में साकार सगुण रूप ही हैं । वह दिन और एकादशी तिथि भी मोक्ष देने वाली 'मोक्षदा' है और फिर ये तीनों एक ही में साकार हैं जो हमारे गुरुदेव जी हैं । भाग्यशाली शिष्य समुदाय को इस वैशिष्ट्य को पहचानना चाहिए और आत्म-मंथन करना चाहिए कि उनलोगों का अवतार भी किसलिए हुआ है । आज का दिन हमें उस ओर विचार करने की प्रेरणा देता है ।

मोक्षदा एक समझ बनाना चाहता हूँ । जो इसे पढ़ेगा, वह ध्यान दे सकेगा । इसके लिए एक उदाहरण प्रस्तुत कर रहा हूँ । जब कभी हम अन्धकार में कहीं देखते हैं, सामने सर्प है तो चिल्लाते हैं, भागते हैं, पसीने-पसीने हो जाते हैं ।

जब चिल्लाहट सुनकर लाठी, डंडे और प्रकाश लेकर लोग दौड़कर सर्प भय से त्रस्त व्यक्ति के पास पहुँचते हैं तो डराने वाला सर्प रस्सी के रूप में दिखाई पड़ता है । डरने वाला व्यक्ति और दौड़ने वाले लोग डर और घबराहट भूलकर हँसने लगते हैं । यही 'माया' है । सर्प गायब रस्सी का असलियत का ज्ञान होने पर सर्प न जाने वहाँ से कहाँ गया ? यदि रस्सी को

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding: KS-MoE-Grant-2

आप जानते, समझते होते तो सर्प कभी नहीं सताता। सर्प को बनाने वाला स्रष्टा निमित्तकारण उपादान, सृष्टि, पालन, संहार करने वाला कौन है? – 'आपका रस्सी' का अज्ञान। ठीक इसीप्रकार आप अपने को नहीं जानते या आत्मा (अपने) का ज्ञान आपको नहीं है तो आप अपने को ही संसार या भव सागर के रूप में देखते-जानते हैं। आपकी न सृष्टि होती है, न पालन और न संहार। आपको बनाने वाला कोई नहीं है, पालने वाला भी नहीं है। आपका संहार भी नहीं है।

आप तो वही सत्य हैं, सनातन हैं, जिसका न आदि है, न अन्त है वही अजर, अमर अविनाशी।

आपने जैसे माया से (भ्रम से, अज्ञान से) सर्प देखा, रस्सी को नहीं जानने से, वैसे उस व्यक्ति में जो "देखने वाली ज्योति" है जब अपनी ही जड़ता, माया, भ्रम, नासमझी से, उस ज्योति को नहीं पहचाना यानी अपने को नहीं जाना, 'आत्मा' जो आप हैं उसे नहीं जाना, उसे जनमने-मरने वाली देह ही माना, तो आप संसार के भयंकर सर्प-विष से व्यथित हैं, पीड़ित हैं। जब गुरु आपकी आँख में ज्ञान का अंजन लगा देता है तो आप अपने को जान जाते हैं।

वही गुरु, गुरुदेव जी हैं। वही गीता, वही श्रीकृष्ण, राम आदि वही हैं। गुरु का महत्व समझें। आप जन्मतिथि मनाएं तो गुरु का अवतरण होना, उनसे भेंट हो जाना, उनके उपदेशों का श्रवण करना आदि अवसर आपको इसलिए मिला कि आप 'बड़े भाग्य मानुष तन पावा' को सफल सार्थक करें। आज के दिन यही 'आत्म-मंथन' का दिन है। आज 'गृह जंजाला' के महा-पाश को तोड़ डालिए। 'आप स्वयं आनन्द हैं', इसे जान लीजिए।

– डा० रामायण उपाध्याय

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पुण्य तिथियों का महत्त्व

महात्मा आशानन्द जी से जब प्रथम बार साक्षात् करने गया था तब बाबा पूजन में थे । बाह्य परिचारकों में किसी ने बताया कि वे एक घंटा बाद बाहर आयेंगे । कथनानुसार प्रतीक्षा करता रहा । ठीक एक घंटा बाद बाबा बाहर आए । सबने दण्डवत-प्रणाम किये । मैंने भी अभिवादन किया ।

औरों के अभिवादन से बाबा कितने प्रसन्न हुए यह तो मैं नहीं बता सकता; किन्तु मेरे अभिवादन के बाद उन्होंने अत्यन्त प्रसन्न होकर मेरी अभिवादन-कला की सबसे प्रशंसा की एवं निम्न श्लोक पढ़ा, जो मनुस्मृति का है ।

अभिवादन शीलस्य नित्यं वृद्धोपसेविनः ।
चत्वारि तस्य वर्द्धन्ते आयुर्विद्या यशो बलम् ॥

अर्थात् जिसका स्वभाव ही अभिवादन (प्रणाम-नमस्कार) करने का हो जाता है तथा जो वृद्ध पुरुषों के चरणों में बैठने को अभ्यस्त हो जाता है - उसकी आयु, विद्या, कीर्त्ति और शक्ति बढ़ जाती है । फिर बाबा ने भक्तों को सम्बोधित करते हुए कहा -

प्रणाम करने की कला इस (मेरी ओर संकेत दे) भक्त की सर्वथा शास्त्रीय है । इस भक्त ने दाहिने हाथ से दाहिने चरण का तथा बायें हाथ से बायें चरण को स्पर्श किया है जिससे मैं भाव विभोर हूँ इसलिए मुख से निकल गया है - आयुष्मान भव वत्स ! - मेरा भी आचार्य पाद-पदमों में बैठकर ऐसे ही अभिनंदन करने का अभ्यास था तथा ऐसे ही आशीर्वाद सुनने का ।

आपने सुनां ही है कि इन्होंने अभिवादन करते समय सनातन धर्म के वेद्यानुकूल वैश्य होने के नाते कहा है - भो आचार्य कौशिक गोत्रोऽहं सोमदेवः त्वाम् अभिवादय - इतना अच्छा संस्कार तथा ऐसी शालीनता बहुतों ने कम ही देखी होगी ।

सबसे ऐसी बातें कर बाबा मेरी ओर पूर्णतः मुखातिब हो गये । पूछा- तुम कहाँ से आए हो और किस कार्य से आए हो ?

मैंने कहा - अभी तो त्रिवेणी स्नान कर जटा शंकर महादेव, कौलेश्वर रुद्रदेव, नरदेवी और वाल्मीकि आश्रम के दर्शन कर आ रहा हूँ - कार्य

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

आपके दर्शन हैं ।

ठीक ही कह रहे हो - स्वर्गागत मनुष्य के जब अच्छे दिन आते हैं तब तीर्थों एवं सन्तों के दर्शन मात्र ही कार्य रह जाते हैं । मैं अत्यन्त ही प्रसन्न हूँ । मेरी स्वाभाविक गंभीरता न जाने कहाँ चली गई है एवं तुम्हारे लिए हृदय तथा वाणी वहिर्मुख हो गयी है । मन कहता है, क्या तुम्हें दूँ कि उचित प्रतिदान हो सके ।

मैंने पुस्तक पर अञ्जली बाँध कर कहा - जैसी कृपा हो ।

उन्होंने मुझे शक्तिगायत्री बतलायी तथा शक्ति चक्र का स्मरण दिलाया जो दो वस्तुएं मेरे पिताजी ने मुझें बतलायी थी । उन्होंने यह भी कहा कि गुरु की ब्रह्मलीन होने की तिथि, निज जन्म तिथि, देव-देवी की कृपा की तिथि आदि पुण्य तिथियाँ हैं । इनमें तुम्हारी जन्म तिथि है जो पुण्यतिथि है तुम्हारे और तुम्हारे लोगों के लिए ।

इसीलिए तुम्हारे अपने बाबा जी द्वारा निर्दिष्ट विषय मेरे द्वारा पुनः स्मारित करा दिये गये । तब मुझे स्मरण हुआ कि 28-12-26 मेरा जन्मदिन है ।

यह घटना वर्षों पहले की है । ठीक-ठाक घटना दिनांक स्मृति पट पर नहीं आ रहा है । स्थान ठोरी का वन्य तथा पार्वत्य स्थल था ।

"मार्ग शुक्ल मोक्षदा एकादशी - श्री रामानन्द भक्ति-योगाश्रम सिवान, बेतिया (बिहार), देवरिया (उ० प्र०) के संस्थापक गुरुदेव गुरुणां गुरु स्वरूपस्थ आचार्य रामानन्द शास्त्री 'आनन्द' जी जो मेरे पतिदेव भी हैं - की जन्मतिथि है । यह दिन महामहोत्सव है । इस पुण्यतम बेला में कृत सत्कर्म अक्षय होते हैं ।

इस परम पावन अवसर पर मेरी शुभकामना है कि सभी प्राणी सुखी रहें, नीरोग हों, सभी मंगलमय रहें -

"सर्वे भवन्तु सुखिनः, सर्वे सन्तु निरामयाः ।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दुःख भाग भवेत ॥"

आश्रम माता

(श्रीमती चन्द्र बाला देवी)

रामानन्द भक्तियोगाश्रम, आनन्द नगर, सिवान ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

आर्यों का आदि निवास स्थान

जैसा कि हम जानते हैं, आरम्भ में गुरुदेव जी श्री रामानन्द शास्त्री 'आनन्द जी' के लेख विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में 'श्री कुमार' नाम से छपते रहे हैं । प्रस्तुत निबंध 'आर्यों का आदि निवास स्थान' ईस्वी 1949 में तत्कालीन प्रसिद्ध पत्रिका "सरस्वती" में छपा था एवं पुरस्कृत भी हुआ था । आश्रम के श्री मधुमंगल राय, प्राक मुख्य अभियंता महोदय वस्तुतः प्रशंसा के पात्र हैं जिनके प्रयास से यह दुर्लभ लेख हमारे समक्ष हो सका है ।

'सम्पादक'

आर्यों के आदि निवासस्थान के सम्बन्ध में वर्त्तमान युग के विद्वानों में नाना प्रकार के मत प्रचलित हैं । आज तक जितने भी विद्वानों ने इस विषय पर आलोचना की है; प्रायः सभी ने आर्य जाति का किसी एक बाहरी देश के आगन्तुक के रूप में वर्णन किया है । इस विषय में प्रधानतः तीन मत प्रचलित हैं । अधिकांश पुरातत्त्वज्ञों तथा ऐतिहासिकों के सिद्धान्त के अनुसार आर्यगण मध्य एशिया के एक अज्ञात प्रदेश में निवास करते थे । वहीं से वे क्रमशः दक्षिण, पूर्व और उत्तर आदि नाना दिशाओं में फैल गए । उनके मतानुसार आर्यों ने कैस्पियन सागर के उपकूल-स्थित किसी भूखण्ड से आकर भारत के उत्तर-पश्चिम प्रदेश, हिमालय तट पर सर्व प्रथम डेरा डाला और वहाँ से क्रमशः वे उत्तर भारत के अन्यान्य प्रदेशों में बस गए ।

मध्य एशिया से आर्यों के आगमन के सम्बन्ध में पुरातत्त्वविद् प्रमाणस्वरूप कुछ कारण प्रदर्शित करते हैं ।

प्रथमतः उनके मत में आर्यों के आदि ग्रन्थ ऋग्वेद संहिता में जिन नदी, नालों और गाँवों तथा शहरों का वर्णन आया है, उनमें से कुछ का स्थान मध्य एशिया में निर्दिष्ट किया जा सकता है ।

---

1. ऋग्वेद-संहिता में प्रसङ्गक्रम से यक्षु, अजु, आर्जीक, गांधार, रूपम,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

दूसरे, शास्त्रों में आर्यों को श्वेतकाय और सुन्दर पुरुष कहा गया है और उनके विरोधियों-विपक्षियों को कृष्णवर्ण, दैत्य या असुर । मध्य एशिया के निवासियों का रंग श्वेत है और भारतवासी प्रायः काले रंग के हैं । इससे आर्यों के मध्य एशिया-निवासी होने की पुष्टि होती है ।

तीसरे, विद्वानों का कहना है कि आर्यों के उपास्य देव-देवियों के नामों और मध्य एशिया के प्राचीन उपास्यों के नामों में अद्‌भुत साम्य है । यही नहीं, प्राचीन आर्यों की भाषा के अनेक शब्द आज भी मध्य एशिया के अनेक भाषाओं में या तो ज्यों-के-त्यों व्यवहृत होते हैं, या तद्भव रूप में । इससे भी प्रतीत होता है कि आर्य मध्य एशिया के केन्द्रस्थान से ही चारों दिशाओं में फैले थे ।

शारदी, शिग्र, कीकट आदि कुछ देशों और आर्जीकीया, सीता या सीरा, सुबास्तु, कुभा, यव्यावती, श्रेतायवी प्रभृति कुछ नदियों का उल्लेख आया है । पुरातत्त्वविद् उनमें यक्षु देश को 'ओक्षुस' (Oxus) या 'ओक्षाभ' नदी का तटवर्ती देश बतलाते हैं । उनके विचार में सीता या सीरा नदी का आधुनिक नाम जक्षर्त्तेस (Jaxartes) अथवा जागजार्त्तेस है ।

सुवास्तु को वे सोयात मानते है या स्वातप्रदेश बतलाते हैं । वर्त्तमान कान्धार देश को वे गान्धार मानते हैं । 'कुभा'–कोफेस नामक नदी काश्मीर के उत्तर-पश्चिम में सू अस्तिव नामक देश में प्रवाहित थी, ऐसी उनकी धारणा है । अन्यान्य नदियों तथा नगरों के नाम भी वे इसी प्रकार निर्धारित करते हैं ।

2. वेदोक्त वायु, सोम, यम, मित्र और असुर प्रभृति शब्दों का पारसियों के 'जेन्द-अवेस्ता' नामक ग्रन्थों में वायु, होम, यिम, मिश्र, अहुर प्रभृति के रूप में वर्णन किया गया है । इसी प्रकार वेदोक्त अक्षिवान, अरुषा, गन्धर्व, अहना प्रभृति शब्दों का ग्रीक लोगों के ग्रन्थों में इक्सियोन, ईरस, केन्टेरिस, डाफीन आदि नामों से वर्णन किया गया है । वेद-वर्णित इन सब शब्दों का अर्थ पारसी और ग्रीक शब्दसमूह से मिलता-जुलता है ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

दूसरे दल के पुरातत्त्वविदों के मत में आर्यगण उत्तरमेरु से क्रमशः दक्षिण की ओर अग्रसर हुए और अन्त में भारत में आकर ठहरे। उनके इस प्रकार विचार प्रकट करने का कारण यह है कि वेदों में दीर्घकाल-व्यापी रात्रि और दिन का उल्लेख है और शीत की अधिकता का वर्णन है। इसके अतिरिक्त ज्योतिषियों की गणना के अनुसार उत्तरमेरु उस समय मनुष्यों के वास के योग्य था।

"वहाँ क्रम से 6 मास दिन और 6 मास रात्रि रहती है।" "वहाँ सूर्य दखिण से उदय होता है।" "वहाँ नक्षत्रों का उदयास्त नहीं है।" ऐसे कथन वेद में पाए जाते हैं। इस भौगोलिक परिस्थिति का उत्तरमेरु की भौगोलिक परिस्थिति से साम्य है। मंत्र के साथ इस अवस्था का सादृश्य है।

इसके अतिरिक्त शास्त्रादि में ब्रह्मरात्रि और ब्रह्मदिन को एक वर्ष का बतलाया गया है। उत्तरमेरु प्रदेश में 6 मास का दिन और 6 मास की रात्रि होती है। यही ब्रह्मदिन और ब्रह्मरात्रि है। आर्यों के उत्तरमेरु परित्याग करने का एक कारण भी वे देते हैं। 'जेन्द आवेस्ता' नामक ग्रन्थ में लिखा है कि आर्यों का स्वर्ग या 'एरियाना भेईजो' उत्तरमेरु प्रदेश में ही अवस्थित है। वहाँ वर्ष में केवल एक बार सूर्योदय होता है। अति हिमपात और शिलावृष्टि के कारण जब वह देश विध्वस्त हो गया और वहाँ अत्यधिक शीत पड़ने लगा तब आर्यों ने दक्षिण की ओर प्रस्थान किया। आर्यों के उत्तर-मेरुवासी होने के समर्थक उनके स्थान-परित्याग के सम्बन्ध में जेन्द अवेस्ता का ही प्रमाण उपस्थित करते है। स्वर्गीय बाल गङ्गाधर तिलक इसी मत के समर्थक थे। उन्होंने अपने 'Orion or Researches into the Antiquity of the Vedas और the Arctic Home in the Vedas नामक ग्रन्थों में इस कथन के प्रतिपादन की चेष्टा की है।

संस्कृत के पिंतृ को पारसी में पेडार, लैटिन में पेटर, द्वि को पारसी में दो, लैटिन में दूओ, युग को पारसी में 'युद्य' लैटिन में युगाम कहा जाता है। इसी प्रकार संस्कृत के अस्मि को 'लिथूनियन' भाषा में एस्मि, 'जेन्दअवेस्ता' में अस्मि; प्राचीन स्लावोनिक भाषा में 'जेस्मि' कहा जाता है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

एक तीसरे मत के पोषकों का कहना है कि जर्मनी के अन्तर्गत पोलैण्ड प्रदेश (किसी-किसी के मत में स्कैण्डिनेविया) में आर्यों का आदि निवास था। भाषा तत्व की आलोचना-द्वारा तथा संस्कृत भाषा के साथ जर्मन भाषा के सादृश्य का अनुभव करके ही उन्होंने इस सिद्धान्त का समर्थन किया है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि आज तक जितने भी विद्वानों ने इस विषय पर गवेषणाएँ की हैं, उन सबने आर्यों को भारत से बाहर किसी दूसरे ही देश का निवासी बतलाया है।

इन विभिन्न मतों और सिद्धान्तों की जब हम तुलनात्मक विवेचना करते हैं, तब इनसे सर्वथा विपरीत किसी और ही निष्कर्ष पर पहुँचते हैं।

वेद के जिन मंत्रों के आधार पर विभिन्न विद्वान् विभन्न मत प्रकट करते है और जिन वैदिक मंत्रों को पृथ्वी की आदि वाणी कहकर संसार के सभी विद्वान् स्वीकार करते हैं, उनका उत्पत्ति-स्थान भारतवर्ष ही है। आज तक कोई भी विद्वान् इस बात का प्रमाण नहीं दे सका है कि वेदों की उत्पत्ति भारतवर्ष के अतिरिक्त किसी-दूसरे देश में हुई। प्राच्य और पाश्चात्य सभी विद्वानों ने वेद को भारतवर्ष का ही आदिग्रन्थ बतलाया है। जब यह सत्य स्वीकृत है, तब आर्यों के आदि निवासस्थान के सम्बन्ध में दूसरा मत ठहर ही किस प्रकार सकता है?

प्रत्येक प्राचीन जाति का परिचय-चिह्न उसकी भाषा और पुरुषानुक्रम परम्परा है। आर्य जाति की भाषा और परम्परागत परिचय भारत के सिवा और कहाँ मिल सकता है?

संस्कृत के 'अस्ति' को लिथूनियन भाषा में एस्ति, जेन्दभाषा में अस्ति, प्राचीन स्लैवोनिक भाषा में येस्तो और लैटिन में येस्त कहा जाता है।

1. जर्मनी में हिटलर के उदय होने पर वहाँ के निवासियों ने अपने आपको आर्यों की विशुद्ध सन्तान कहकर बड़े जोरों के साथ प्रचार करना आरम्भ कर दिया था।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

जो आर्यों को मध्य एशिया, उत्तर मेरु प्रदेश अथवा जर्मनी के उत्तरी प्रान्त का अधिवासी बतलाते हैं, क्या वे उस प्रदेश में आर्यों के आदि निवास के प्रमाण-स्वरूप कोई अतीत का परिचय-चिह्न, संस्कृति अथवा भारत की तरह भाषा प्रभृति की एकता का निदर्शन कर सकते हैं ?

पृथ्वी की जितनी भी जातियों ने आज तक उन्नति की सीमा का अतिक्रमण किया अथवा नाना दिशाओं में फैलकर उपनिवेश बसाए, उनके उद्‌गम-स्थान, भाषाभाव और संस्कृति की एकता का कोई-न-कोई निदर्शन अवश्य ही प्राप्त है । इसी आधार पर जो आर्यों को मध्यएशियावासी अथवा उत्तरमेरुवासी बतलाते हैं, वे इसका कोई प्रमाण भी क्या दे सकते हैं ?

कोई जाति उन्नत, शक्तिशाली अथवा बहुसंख्यक होने पर यदि विदेशों में अपना उपनिवेश स्थापित करती है तो इस कारण वह अपने स्वदेश को कभी त्यागती नहीं । उदाहरणार्थ हम अंग्रेज जाति को ही ले सकते हैं । सोलहवीं शताब्दी से आरम्भ कर अंग्रेजों ने संसार के प्रायः समस्त भागों में अपने उपनिवेश स्थापित किए । एशिया, अमेरिका, आस्ट्रेलिया, अफ्रीका आदि महाद्वीपों में उन्होंने निवास भी अंगीकार किया किन्तु फिर भी उन्होंने स्वदेश को नहीं छोड़ा; न स्वजाति का परिचय-चिह्न खोया । विदेशों में उपनिवेश स्थापित करने के कारण उनके आदि स्थान और आदि जाति की ही अधिकाधिक समृद्धि और उन्नति हुई ।

केवल अङ्ग्रेज ही नहीं, फ्रेंच, जर्मन, डच, पोर्तगीज आदि जिस किसी भी पाश्चात्य जाति पर हम दृष्टि डालें, हमें यही दिखाई देता है कि विदेशों

---

2. अध्यापक मैक्समूलर ने नाना देशों के नाना ग्रन्थों की आलोचना कर इस सिद्धान्त को निश्चित माना है कि ऋग्वेद ही सभ्य जगत् का आदि ग्रन्थ है । One thing is certain, there is nothing more ancient primitive, not only in India, but in the whole Aryan world, than the hymns of the "Rigveda,"—Origin and Growth of Religion.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

में जाकर उन्नति करने पर उनके अपने देश की ही समृद्धि हुई। यहाँ तक कि अपने देश की उन्नति और उसके साथ अविच्छेद्य सूत्र में आबद्ध होने में वे सर्वदा गौरव का अनुभव करते हैं। इस दशा में यह कैसे माना जा सकता है कि आर्य जैसी एक सुसभ्य जाति ने, जो ज्ञान, विज्ञान, दर्शन, साहित्य, गणित, ज्योतिष, शौर्य-वीर्य आदि सभी विषयों में आश्चर्यजनक उन्नति कर चुकी थी, अपनी जन्मभूमि को एकदम भुला दिया और विदेश में जाकर विदेशियों के साथ मिलकर उसने अपने सम्पूर्ण अस्तित्व को खो दिया।

यह भी सम्भव प्रतीत नहीं होता कि संख्याधिक्य के कारण एक सुसभ्य जाति के बच्चे-बूढ़े, स्त्री-पुरुष सब विदेश चले जाएँ और उनके आदि निवासस्थान में उनके परिचय-चिह्न-स्वरूप एक भी प्राणी अवशिष्ट न रहे। पृथ्वी के इतिहास में यह एक असम्भव-सी घटना है।

जब आर्यों के आदि निवासस्थान 'आर्यावर्त्त' के अस्तित्व का परिचय एकमात्र भारतवर्ष में ही मिलता है, उनकी भाषा और साहित्य का प्रकृष्ट निदर्शन वेद, वेदान्त शास्त्र प्रभृति जब इस भारत में ही विद्यमान हैं और ब्राह्मणादि वर्ण-चतुष्टय जब अपने को उन्हीं के पुरुषानुक्रमिक वंशज कहकर परिचय देते रहे हैं, तब भारतवर्ष के अतिरिक्त उनका आदिस्थान और कहाँ निर्दिष्ट किया जा सकता है?

भारतवर्ष ही आर्य सभ्यता की आदिभूमि है और यहीं से वे देश-विदेश में फैले थे, इसका प्रमाण हमारे धर्मग्रन्थों में ही मिलता है। संसार में जब वैदिक धर्म के अतिरिक्त और कोई धर्म ही नहीं उत्पन्न हुआ था, पृथ्वी पर जब आर्यों से अधिक शक्तिशाली किसी जाति का उद्भव ही नहीं हुआ था, उस समय आर्य ही पृथ्वी के अधीश्वर थे। संसार में वैदिक धर्म के अतिरिक्त और कोई दूसरा धर्म न होने के कारण उस समय आधुनिक काल की तरह समुद्र यात्रा निषिद्ध नहीं थी। हम शास्त्रों में देखते हैं कि आर्यों ने उस उन्नति-युग में अमेरिका महाद्वीप तक अपना राज्य-विस्तार किया था। योरप का प्रत्येक प्रदेश उनके अधीन था, अफ्रीका उनके लिए अगोचर न था।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ऐसा उल्लेख मिलता है कि स्वयंभू मनु[1] के पुत्र प्रियव्रत ने पृथ्वी को सात द्वीपों में विभक्त किया था- जम्बु, प्लक्ष, पुष्कर, क्रोंच, शक, शाल्मली और कुश । इन सात नामों से सात द्वीपों को पुकारा जाता था ।

यही सात द्वीप वर्त्तमान समय में क्रमशः एशिया, दक्षिणी अमेरिका, उत्तरी अमेरिका, अफ्रीका, योरप, एण्टार्कटिक (दक्षिणी मेरु के आसपास का प्रदेश), आष्ट्रेलिया एवं ओशेनिया के नाम से परिचित हैं । यद्यपि पश्चिम के कुछ विद्वान् इस मत से सर्वांशतया सहमत नहीं है, तथापि स्थूलतः इन सात दीपों के द्वारा समस्त संसार को ही समझा गया था, इसमें कोई सन्देह नहीं है ।

कर्नल विलफोर्ड ने भारतवर्ष को जम्बूद्वीप के नाम से अभिहित किया है । उनके मत में प्लक्षद्वीप-एशिया का उत्तरी भाग ओर समस्त अमेरिका महादेश, पुष्कर द्वीप-आयलैंड, शकद्वीप-ब्रिटिश द्वीपसमूह, क्रोंच द्वीप जर्मनी; शाल्मली द्वीप-आड्रियाटिक और बाल्टिक सागर के सन्निकट देश-समूह; कुश द्वीप-भारत की पश्चिमी सीमा पर स्थित कैस्पियन सागर और पर्शियन उपसागर के निकटवर्त्ती स्थित देशसमूह हैं ।

हमारे शास्त्र और पुराणों में विभिन्न देशों के जो-जो नाम व्यवहृत हुए हैं, उन्हें वर्त्तमान समय में हम भूल चुके हैं । अनेक अनुसन्धान करने पर कदाचित् ही कहीं किसी देश के नाम का पूर्वपरिचय मिलता है । ऐसे परिवर्तनों का होना कोई अस्वाभाविक बात नहीं हैं । दृष्टान्तस्वरूप इस भारतवर्ष को ही हम ले सकते हैं । कभी इस देश का नाम जम्बूद्वीप था, फिर

---

1. एक-एक मनु के नामानुसार मन्वन्तर की सूचना होती है । शास्त्र में चौदह मनुओं का उल्लेख है - स्वायम्भुव, स्वारोचिष, उत्तम, तामस, वैवत, चाक्षुव, वैवस्वत, सावर्णि, दक्षसावणि, ब्रह्मसावर्णि, धम्रसावर्णि, रुद्रसावर्णि, देवसावर्णि, इन्द्रसावर्णि । वर्त्तमान समय सप्तम या वैवस्वत मनु का काल चल रहा है । द्रष्टव्य- विश्व का इतिहास-दुर्गादास ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

आर्यों के समय में इसका नाम आर्यावर्त्त पड़ा। राजा भरत के राजत्वकाल में इसका नाम भारतवर्ष हुआ, मुसलमानों के आगमन पर हिन्दोस्तान और अङ्ग्रेजों के आगमन पर इण्डिया।

भारतवर्ष का ही यह सौभाग्य है कि इतने परिवर्तनों के पश्चात् भी उसका अस्तित्व आज तक विद्यमान है। अन्यथा प्राचीन-युग के ऐसे अनेक देश हैं, जिनका पूर्व-परिचय आज प्राप्त नहीं है।

कुरुक्षेत्र-युद्ध के पूर्व दिग्विजय-यात्रा में निकलकर पाण्डवों ने जिन-जिन देशों पर अधिकार किया था, महाभारत के सभापर्व में उनका वर्णन आया है। प्रथम यात्रा में उन्होंने वर्मा, चीन, श्याम, तिब्बत, मंगोलिया, तातार, पारस आदि देशों को विजय किया और हीरात, काबुल, कन्धार और बिलोचिस्तान होकर वे स्वदेश वापस लौटे; दूसरी यात्रा में उन्होंने लंका से अरब, मिश्र, जंजीबार और अफ्रीका के विभिन्न देशों को विजय किया।

महाभारत के आदिपर्व में सगर राजा के द्वारा भारत महासागर में स्थित भारतीय द्वीपसमूहों की विजय का वर्णन आया है। अर्जुन के द्वारा पाटल (पाताल) देश-विजय और नागकन्या उलूपी से विवाह करने का वर्णन अमेरिका-विजय का ही वर्णन है। अमेरिका और भारतीय द्वीपपुंजों में कुछ दिन पूर्व भी राम-सीता के पूजन की पद्धति प्रचलित थी। इस प्रकार अनुसंधान करने से ज्ञात होता है कि एक समय संसार के समस्त देशों

हिन्दु और इण्डिया इन दोनों शब्दों की उत्पत्ति का एक विचित्र इतिहास है। हिब्रू भाषा में हनद शब्द का अर्थ है विक्रम, तेज, शक्ति, गौरव आदि। हिब्रू भाषा के 'एस्तार' नामक ग्रन्थ में लिखा है-राजा आहा सुरेश हनद से लेकर इथियोपिया देश तक राज्य करते थे। अर्थात् उनके राज्य की एक सीमा भारतवर्ष और दूसरी सीमा मिश्र देश तक फैली हुई थी। भारतवर्ष को वे लोग 'हनद' अर्थात् गौरवान्वित राज्य के नाम से पुकारते थे। यह 'हनद' शब्द पारसियों के 'जेन्द अवेस्ता' नामक ग्रन्थ के 'हिन्दव' शब्द से उत्पन्न हुआ है। वही शब्द ग्रीक भाषा में हन्दकोष (Handkosh) इन्डिकोस (Indikos) और इन्डियोस (Indios) प्रभृति शब्दों में रूपानतरित हुआ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

के साथ भारत का निकट सम्बन्ध था। यहाँ तक कि जिस उत्तरमेरु को आर्यों का आदि निवासस्थान कहा जाता है, वह भी आर्यों के लिए अगम्य न था। महाभारत के वनपर्व में पाण्डु राजा ने कुन्ती से उत्तर कुरुदेश की स्त्री-जाति का वर्णन किया था। इससे ज्ञात होता है कि उत्तर कुरुदेश के विषय में भी उनको जानकारी थी।

भारतीय आर्य पृथ्वी के एकच्छत्र अधिपति थे और संसार के समस्त स्थानों के लिए वे 'अप्रतिहतरथ' थे। इस सत्य को स्वीकार कर लेने पर आर्यों के आदि निवासस्थान के विषय में कोई संशय नहीं रहता।

अब रही ऋग्वेद में वर्णित विविध भौगोलिक संज्ञाओं की बात। उनके संबंध में यह कहा जा सकता है कि किसी वस्तु-विशेष जानकारी का अर्थ वहाँ का अधिवासी होना नहीं है।

ऋग्वेद में वर्णित नदी-नाले और नगरादि आर्यों के सुपरिचित थे, इसी कारण उनका ऋग्वेद में वर्णन मिलता है। अपने देश के अतिरिक्त दूसरे देशों की नदियों और नगरों के वर्णन करने का अर्थ यह नहीं है कि आर्य उन देशों के निवासी रहे होंगे। इंग्लैण्ड अथवा फ्रांस की किसी पुस्तक में यदि भारत के किसी शहर या नदी का नाम आए तो इसका यह अर्थ नहीं होता

उसी से अंग्रेजी भाषा में 'इण्डिया' की उत्पत्ति हुई। पस्तु भाषा में 'हिनद' और 'हनदु' शब्दों का व्यवहार होता है। इस प्रकार पारसियों के निकट से यहूदियों ने और उनके निकट से अन्यान्य जातियों ने हिन्दू या इन्डिया शब्द को प्राप्त किया। मूलतः इन दोनों ही शब्दों का अर्थ है– "पवित्र गौरवान्वित जाति।" इसके द्वारा प्राचीन काल में हिन्दुगण अन्यान्य जातियों के निकट कितने सम्मानित थे, इसका प्रमाण मिलता है। पारसियों के मत में 'जेन्द अवेस्ता' उनका सबसे प्राचीन ग्रन्थ है। उस प्राचीन ग्रन्थ में ही जब भारतवर्ष को 'हनद', गौरवान्वित राज्य कहा गया है तब भारतवर्ष का गौरव उससे और भी कितना प्राचीन होगा, इसकी सहज ही कल्पना कर सकते हैं।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कि इग्लैण्डवासी या फ्रांसवासी लेखक मूलतः भारत का निवासी हैं। अर्थात् केवल अभिज्ञता आदिनिवास की परिचायक नहीं है। उत्तर मेरुप्रदेश में 6 मास तक दिन और 6 मास तक रात्रि रहती है, इस तथ्य की जानकारी आर्यों को थी पर केवल इसी जानकारी के आधार पर तो आर्यों को मेरुप्रदेश-निवासी नहीं माना जा सकता।

कुछ दिन पूर्व योरप में रोमनों का इतना प्रभाव हो चुका था कि इंग्लैण्ड, फ्रांस, स्पेन आदि देशवासी रोमभावापन्न हो गये थे। आज वह सब प्रभाव दूर हो चुका है। केवल उनकी भाषाओं में कुछ रोमन (लैटिन) शब्द मिल गए है और उनके आचार-व्यवहार में कुछ-कुछ रोमन भाव का आभास मिलता है। केवल कुछ शताब्दियों के पूर्व की घटना जब इस प्रकार से परिवर्तित हो चुकी है तो उससे कितनी ही अधिक प्राचीन आर्यजाति के सम्बन्ध में इस प्रकार का परिवर्त्तन नितान्त स्वाभाविक बात है।

अधिकांश प्राचीन सभ्य जातियों के ग्रन्थों को पढ़ने से पता चलता है कि वे किसी एक विशेष काल में विशेष स्थान से आकर उस देश में प्रतिष्ठित हुई थी, किन्तु आर्यों के ग्रन्थों में इस प्रकार का कोई उल्लेख नहीं आया है। बल्कि इसके विपरीत शास्त्रों को पढ़ने से यही पता चलता है कि भारतवर्ष से ही उन्होंने बाहर जाकर विदेशों में अपना आधिपत्य स्थापित किया।

आर्यों को सुन्दर श्वेतकाय कहा गया है किन्तु इस देश के मनुष्य कृष्णवर्ण है; इस युक्ति में भी विशेष बल नहीं है। भारतवर्ष के ब्राह्मणादि उच्चवर्णों के लोग साधारणतः गौरवर्ण होते हैं। हिमालय प्रदेश, काश्मीर पंजाब आदि देशों में तो श्वेतकाय सुन्दर मनुष्य ही निवास करते हैं।

आर्य हिन्दु-गण स्वायम्भुव मन्वादि काल से ही आजतक अपने वंश-परिचय का निर्णय करते हैं। अतएव ऐसी अवस्था में आर्यों को किसी भिन्न देश से भारत में आना किसी प्रकार भी सम्भव नहीं है।

यदि कोई कहे कि अत्यधिक उत्ताप के कारण उत्तर-मेरुवास के पे

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अयोग्य हो जाने पर आर्यगण दक्षिण की ओर चले आए तो, नैसर्गिक अवस्था के विषय में आलोचना करने पर, हम इस सिद्धान्त को भी नहीं मान सकते। पृथ्वी की दैनिक और वार्षिक गति के विषय में जिनको थोड़ा-बहुत ज्ञान है, वे अवश्य ही इस बात को समझ सकते हैं कि मेरुप्रदेश में कभी अत्यधिक उत्ताप की वृद्धि नहीं हो सकती, कारण सूर्य की प्रखर किरणों का वहाँ तक पहुँचना सम्भव नहीं है। आधुनिक वैज्ञानिकों ने पृथ्वी की गति के विषय में जो सिद्धान्त प्रकट किए हैं, उनसे इस बात का कोई भी प्रमाण नहीं मिला है. कि मेरुप्रदेश में सूर्य की किरणें अधिक पड़ने के कारण वहाँ शीत का अभाव हुआ होगा।

सूर्य की प्रखर किरणें प्रधानतः विषवत् रेखा के निकट ही पड़ती हैं। विषुवत् रेखा के उत्तर और दक्षिण में जो प्रदेश जितनी दूर तक अवस्थित होगा, उस प्रदेश में उसी के अनुसार उत्ताप की वृद्धि और कमी होगी। मेरु प्रदेश में कदाचित् ही सूर्य की किरणें प्रवेश करती हैं।

सूर्य की गति पूर्व की तरह समान भाव से विद्यमान है, यदि इस बात को स्वीकार कर लें तो मेरु प्रदेश में किसी समय चिरवसन्त विराजमान था और वहाँ संसार की श्रेष्ठ जाति निवास करती थी, इस बात को सिद्ध नहीं किया जा सकता है।

इसके अतिरिक्त वेदादि ग्रन्थों में उत्तर-मेरु का जो वर्णन है, इतने दिनों बाद आज भी उसमें कोई परिवर्त्तन नहीं दिखाई देता है। इतने वर्ष पूर्व वहाँ की जो अवस्था थी, आज इतने दिनों पश्चात् भी यदि उसमें कोई परिवर्तन न हुआ हो तो फिर किस प्रमाण पर आधार कर हम यह कह सकते हैं कि वहाँ की अवस्था उस समय कुछ और ही थी। यदि भूकम्प अथवा किसी ऐसी ही आकस्मिक दुर्घटना के कारण उस प्रदेश में कोई परिवर्त्तन होता तो उसका प्रमाण हमें प्राचीन ग्रन्थों में अवश्य ही मिलता।

वेद में शीत की अधिकता का वर्णन आया हे, ऐसा कहकर जो आर्यों को उत्तर-मेरु का निवासी बतलाते हैं, उनके इस कथन की सत्यता दो कारणों से भ्रमपूर्ण ज्ञात होती है। प्रथमतः वेद में शीत की अधिकता का वर्णन ही

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

नहीं आया है। द्वितीयतः वेद में जिस प्रकार शीत का वर्णन आया है, उसी प्रकार शरद्, हेमन्त और वसन्तादि ऋतुओं का भी वर्णन आया है। अतएव यदि वेद में शीत का वर्णन देखकर ही आर्यों को ठण्ढे देश का निवासी बतलाया जा सकता है तो शरद्, हेमन्त और वसन्तादि का वर्णन होने के कारण उनको शरद्-देश, हेमन्त देश और वसन्त देश का निवासी भी बतलाया जा सकता है।

इस प्रकार की युक्तियों से हम किसी निर्णय पर नहीं पहुँच सकते। प्रत्युत शीत, हेमन्त, शरद्, वसन्त, ग्रीष्म और वर्षा इस 6 ऋतुओं का वर्णन देखकर हम इसी सिद्धान्त पर सरलता से पहुँच सकते हैं कि आर्य भारत के निवासी थे। कारण, भारतवर्ष के अतिरिक्त और कोई ऐसा देश नहीं मिलता, जहाँ इन छहों ऋतुओं का ऐसा सुन्दर समावेश हो। फलतः ऋतुओं के सम्बन्ध में आलोचना करने पर भी हमारा यह विश्वास और दृढ़ हो जाता है कि भारतवर्ष ही आर्यों का आदि निवास-स्थान था।

मेरु प्रदेश के विषय में 'जेन्द अवेस्ता' की उक्तियों को यदि हम स्वत सिद्ध भी स्वीकार कर लें तो उससे केवल यही प्रमाणित होता है कि पारसियों के कोई आदि पुरुष उत्तरमेरु में वास करते थे। इससे किसी प्रकार इस बात का आभास नहीं मिलता कि आर्यों के आदिपुरुष मेरुप्रदेश से यहाँ आए थे।

आर्यगण उत्तरमेरु प्रदेश के निवासी थे, इस सिद्धान्त के समर्थकों में भारतीयों में बालगङ्गाधर तिलक प्रधान हैं। उनके मत में ईसा से 10 से हजार वर्ष पूर्व उत्तरमेरु शीत की अधिकता के कारण वास के अयोग्य हो चुका था। उस समय से 8 से 5 सहस्र ईसवी पूर्व के अन्दर आर्यों ने उत्तरमेरु प्रदेश को त्यागकर विभिन्न देशों में गमन किया।

इन कथनों के द्वारा उन्होंने इसी बात को प्रमाणित करने की चेष्टा की है कि वैदिक मन्त्रों में उत्तरमेरु के वर्णन का जो आभास-सा मिला है, वह आर्यों की पूर्वस्मृति का निदर्शन है। यहाँ यह कहना आवश्यक है कि स्व॰ तिलक ने आर्यों के उत्तरमेरु-परित्याग के सम्बन्ध में काल-परिमाण का जो निर्देश किया है, वह प्रधानतः अमेरिकन और योरपीय विद्वानों के आधार

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE Grant-2

किया है ।

वैदिक मन्त्रों के काल-परिमाण का निर्णय और आर्यों के उत्तरमेरु-वास का विचार कहाँ तक युक्तिसंगत है, थोड़ी-सी आलोचना करने पर इसका पता चल जाएगा ।

स्वयं तिलक के सिद्धान्तों से ही यह दिखाई देता है कि उत्तरमेरु प्रदेश के त्याग करने के साढ़े चार सहस्त्र वर्ष पश्चात् वैदिक सूत्रों की रचना हुई। यदि ऐसा ही है तो साढ़े चार हजार वर्ष पूर्व की स्मृति को आर्य किस प्रकार सुरक्षित रख सके और फिर उसका वर्णन भी कर सके ! क्या उत्तरमेरु के वे अधिवासी साढ़े चार हजार वर्ष के पश्चात् भी जीवित थे ? एक मनुष्य के लिए साढ़े चार हजार वर्ष तक जीवित रहना किस प्रकार संभव है ? और इतने दीर्घकाल तक उस स्मृति को हृदय में धारण कर फिर उसको समसामयिक रूप से वर्णन करना भी किस प्रकार सम्भव है ? उत्तरमेरु को त्यागने और वेदों की रचना करने के बीच जो साढ़े चार हजार वर्षों का दीर्घ समय बीता, उस समय में आर्यों ने जो नाना प्रकार के कष्ट सहे, जिन नाना देशों में भटकते फिरे, नाना प्रकार की अभिज्ञताओं का संचय किया, नाना देशों का भ्रमण किया, उनका कोई उल्लेख नहीं किया, यहाँ तक कि आभास तक नहीं दिया और साढ़े चार हजार वर्ष पूर्व की बातें उन्होंने लिख डालीं, यह कैसे माना जा सकता है !

'आर्य' जर्मनी, स्कैण्डिनेविया या पोलैण्ड से देश-विदेश में फैले । इस सिद्धान्त के प्रतिपादन के लिए जो युक्तियाँ दी जाती हैं, उनका मूल आधार

(1 अमेरिका के बोस्टन विश्वविद्यालय के प्रेसिडेण्ट डाक्टर 'वारेन' ने उत्तरमेरु के सम्बन्ध में जिन ग्रन्थों की रचना की, उन्हीं को पढ़कर तिलक ने प्रथम इस मत का समर्थन किया । इसके बाद मिस्टर गिलबर्ट, मिस्टर 'किञ्चेल' अध्यापक 'स्पेन्सर' आदि अमेरिकन पण्डित, अध्यापक 'गिकि्', मि० 'मालार्डरिड' आदि इंग्लैण्ड के विद्वानों और 'मोनस्टूअर्ट' 'जेराफ' आदि नारवे के विद्वानों के मतों को पढ़कर वे इस सिद्धान्त पर पहुँचे ।)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

उन देशों की भाषाओं के साथ आर्यभाषा का साम्य ही है । पर मैक्समूलर, आदि पण्डितों के विचार में भाषाओं के अन्दर ऐसा कोई गुरुत्वपूर्ण सादृश्य नहीं पाया जाता । केवल कुछ पशु-पक्षियों के नामों का सादृश्य ही उपलब्ध है । ऐसा सादृश्य पृथ्वी के अनेक देशों में पाया जाता है ।

स्कैण्डिनेबिया, जर्मनी, आदि समुद्रतटवर्ती देश हैं । यदि आर्य उन देशों से आए होते तो सामुद्रिक मछलियों तथा समुद्री नामों के साथ उनका अधिक परिचय होता, किन्तु ऐसा नहीं देखा जाता है ।

इसप्रकार जब हम देखते हैं कि जहाँ आर्यों के विदेश से भारत में आने का कोई प्रमाण नहीं मिलता है, केवल अनुमान पर निर्भर करके ही विद्वान् उस सिद्धान्त पर पहुँचे हैं, वहाँ आर्यावर्त्त के साथ उनकी कीर्ति और गौरवस्मृति अविच्छेद्य भाव से जड़ित है । वस्तुतः भारत से ही विदेशों में जाकर आर्यों ने अनेक स्थानों में अपने उपनिवेश बसाए और विश्व-विजय की । आर्यों के प्राचीन साहित्य में इसे सिद्ध करनेवाले प्रमाण उपलब्ध हैं ।

आर्यों के आदि निवासस्थान का परिचय 'आर्यावर्त्त' शब्द से मिलता है । 'आर्यावर्त्त' शब्द का अर्थ कुल्लूक भट्ट ने इस प्रकार किया है– "आर्या अत्रवर्त्तन्ते पुनः पुनरुद्भवतीत्यार्यावर्त्तः– अर्थात् आर्यों ने इसी स्थान पर बार-बार जन्मग्रहण किया है, इसलिए इस स्थान का नाम 'आर्यावर्त्त' है । महर्षि मनु ने आर्यावर्त्त की सीमा इस प्रकार निर्दिष्ट की है :-

आसमुद्रात्तु वै पूर्वादासमुद्रात्तु पश्चिमात् ।
तयोरेवान्तरं गिर्योरार्यावर्त्तं विदुर्बुधाः ।

जिसके पूर्व और पश्चिम में समुद्र विद्यमान है, उत्तर और दक्षिण में पर्वतमाला विराजमान है, वह पुण्यभूमि ही आर्यावर्त्त है । इससे ज्ञात होता है कि उत्तर में हिमालाय, दक्षिण में विन्ध्याचल, पूर्व में बंगोपसागर और पश्चिम में अरबसागर, इन चार सीमाओं के अन्तर्गत प्रदेश ही आर्यावर्त्त है ।

रामायण के आदिपर्व में सगर राजा ने यज्ञवर्णन के उपलक्ष में आर्यावर्त्त का आभास दिया था । उससे ज्ञात होता है कि हिमालय और विन्ध्याचल के

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मध्य का प्रदेश ही आर्यों का आदि निवासस्थान था ।[2]

अमर कोष में लिखा है कि विन्ध्य और हिमालय पर्वत का मध्यप्रदेश ही आर्यों का निवासस्थान था ।[3] यही आर्यावर्त्त ब्रह्मावर्त्त, ब्रह्मर्षि देश, मध्यदेश आदि भागों में विभक्त था ।

सरस्वती और दृषद्वती नदियों के मध्य का प्रदेश ब्रह्मावर्त्त; कुरुक्षेत्र, मत्स्य, पांचाल और सूरसेन प्रभृति देश ब्रह्मर्षिदेश, हिमालय और विन्ध्य के मध्य और विनशन के पूर्व और प्रयाग के पश्चिम का देश मध्यप्रदेश के नाम से पुकारा जाता है ।[4] विदेश जय करने पर किसी-किसी समय आर्यावर्त्त की सीमा बढ़ भी जाती थी । वामन पुराण में जम्बूद्वीप (भारतवर्ष) का जो वर्णन है, उससे ज्ञात होता है कि उत्तर में तुर्किस्तान तक भारत की सीमा फैली हुई थी ।

महर्षि मनु-द्वारा वर्णित आर्यावर्त्त की सीमा की व्याख्या करने पर कुछ विद्वानों के मत में पूर्व में चीन समुद्र तक और पश्चिम में भूमध्य सागर तक आर्यावर्त्त की सीमा फैली हुई थी । ग्रीक ऐतिहासिक आरियान के मत में भारतवर्ष की सीमा उत्तर में तरास पर्वतमाला, साईलेशिया, लाईसिया, पाम्फेलिया, प्रभृति देशों तक विस्तृत थी ।

तरास पर्वतमाला एशिया के तुरस्क राज्य में अवस्थित है । उनके मत में तरास से काकेशस और काकेशस से हिमालय के उत्तर तक भारत की

---

1. मेघातिथि ने मनु के उक्त श्लोक का भाष्य इस प्रकार किया है– "पर्वतयोर्हिमवद्विन्ध्ययोर्यदन्तरं मध्यः सः आर्यावर्तो देशो बुधैः शिष्टैरुच्यते"– मनु 2 अध्याय 21 श्लोक, मेघातिथि भाष्य ।

2. आदिपर्व, 39 वाँ अध्याय, 4-5 श्लोक ।

3. आर्यावर्त्तः पुण्यभूमिर्मध्यं विन्ध्यहिमालयोः (History of the world by Durgadas द्रष्टव्य)

4. मनुसंहिता, द्वितीय अध्याय, 17-22 श्लोक ।)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2
सीमा फैली हुई थी । इस मत के अनुसार अरब, पारस और टर्की का कुछ अंश और अफगानिस्तान, बिलोचिस्तान-सहित मध्यएशिया का विराट् अंश भारत के अन्तर्गत था ।

चीन, पारसी, पारद, दरद और हूण प्रभृति जातियाँ भारत की सीमा पर निवास करती थीं, मनुसंहिता में ऐसा उल्लेख आया है । आरियान एवं मनु के मतों को मिलाकर पाश्चात्य पण्डितों ने इस प्रकार से भारत की सीमा निर्धारित करने की कोशिश की है ।

ग्रीक ऐतिहासिकि 'टालेमी' के मत में भारत की सीमा मध्य एशिया के बहुत दूर तक विस्तृत थी । उनके मतानुसार उसके उत्तर में बैक्ट्रिया, पश्चिम में पार्थिया (पारस) और पूर्व में अराकान और ब्रह्मदेश था । आर्यों ने समय-समय पर विभिन्न देश जीतकर अपने राज्य में मिला लिए थे, इसी कारण इस विषय में नाना प्रकार के मत प्रचलित हैं ।

ऋग्वेद संहिता में आर्य शब्द का उल्लेख बार-बार आया है। आर्यगण यज्ञ कर रहे है; आर्यगण इन्द्रादि देवताओं से वर की प्रार्थना कर रहे है, ऐसे उल्लेख ऋग्वेद के बहुत से है (1)

आर्य शब्द का अर्थ है –

'महाकुलकुलीनार्य सभ्यसज्जनसाधवः' (इत्यमरः) ''आराजातास्तत्त्वेभ्य इत्यार्याः, आर्या मतिर्यस्य स आर्यमतिः'' (वाचस्पति मिश्रः) कर्त्तव्यमाचरन् कामकर्त्तव्यमनाचरन्, तिष्ठति प्रकृतिचारो यः स आर्य (इति स्मृतिः)

जो महाकुल, कुलीन, सज्जन, साधु जो आर्यमति अर्थात् विशुद्ध तत्त्वनिचय का निकटवर्ती श्रेष्ठ बुद्धियुक्त व्यक्ति है; जो कर्त्तव्य परायण;

(1. ऋग्वेद में प्रथम, तृतीय, चतुर्थ, षष्ठ, प्रभृति मण्डलों में आर्य जाति का उल्लेख हुआ है ।)

''भारतवर्ष की सीमा'' के सम्बन्ध में श्री गुरुदेव जी के शिष्य श्री रामायण उपाध्याय लिखित लेख जो पीयूष बल्ली अंक 109 में प्रकाशित हुआ है, द्रष्टव्य है ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अकर्त्तव्यविमुख और आचारवान् है, वही आर्य नाम से पुकारा जाता है । संक्षेप में जो सर्व गुणाधार और सम्पन्न थे, वे ही आर्य कहलाते थे ।

यास्क ने वेद-व्याख्यान में अपने निरुक्त ग्रन्थ में आर्यों का साक्षात् ईश्वर का पुत्र कहकर वर्णन किया है । कारण वे भगवत्प्राप्ति की चेष्टा में सदैव मग्न रहते थे ।

आर्य शब्द ऋ धातु से उत्पन्न हुआ है (ऋ+न्यत) । ऋ धातु का अर्थ है 'गमन', 'व्याप्ति' । सायणचार्य ने उस धातु के अर्थ के अनुसार आर्यशब्द का अर्थ अरणीर्य या 'गन्तव्य' किया है, जिन्होंने नाना स्थानों में जाकार अपनी कीर्ति की प्रतिष्ठा की । आर्य शब्द के अर्थ से यही समझा जाता है । आर्यों के अतिरिक्त, अन्यान्य जातियों को अनार्य कहा जाता था । वेद में उनको कभी दस्यु और कभी दास के नाम से कहा गया है । यदि मध्यएशिया अथवा उत्तरमेरु के किसी केन्द्र से आर्यगण पृथ्वी के चारों ओर फैलते तो आर्य और अनार्यो की संज्ञा इस प्रकार कभी न दी जाती और न एक ही पूर्वजों के वंशधरों के आचार-व्यवहार, ज्ञान-बुद्धि में इतनी विभिन्नता मिलती; व ऋग्वेद आदि लिखे जाने के सहस्त्रों वर्ष पश्चात् भी अन्य देशवासी इतने असभ्य और मूर्ख होते । यदि एक ही जाति एक ही समय में भिन्न-भिन्न देशों में फैलती तो केवल भारतवर्ष ही ज्ञान, विज्ञान, दर्शन आदि विषयों में इतना उन्नत न होता और न अन्यान्य देश अज्ञान के अंधकार में डूबे रहते ।

---

1. योरपीय आर्य शब्द का अर्थ दूसरे प्रकार से करते है । उनके अर्थानुसार आर्यगण 'कृषक' श्रेणी के है और आर्य शब्द 'अर्' धातु से उत्पन्न हुआ है । 'अर' धातु का अर्थ 'भूमिकर्षण' है । अर्थात् भूमिकर्षण या कृषिकार्य जिनकी जीवका थी, वे ही आर्य नाम से परिचित थे । प्राचीन लैटिन और ग्रीक भाषा में 'अर्' (Ar) धातु का अर्थ है 'कर्षण' । योरप की अधिकांश भाषाओं में 'अर्' धातु इसी अर्थ में प्रयुक्त है । अतएव आर्य शब्द का अर्थ भी वे इसी प्रकार करते हैं । यह धारणा कितनी भ्रमपूर्ण है, इसका पता सहज ही मिल जाता है । संस्कृत में 'अर्' नाम की कोई धातु ही नहीं है; आर्य शब्द 'ऋ' धातु से उत्पन्न हुआ है । अतएव पाश्चात्य पंडितों के इस सिद्धान्त को हम किसी प्रकार स्वीकार नहीं कर सकते ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

माँगता हूँ यही

• • •

माँगता हूँ यही, दे रहे हो अगर
सामने ही रहो मैं निहारा करूँ ।
शब्द में नाम तेरा सुनाई पड़े
रूप में रूप तेरा दिखाई पड़े
दिव्य तेरे करों का सदा स्पर्श हो
स्वाद में जूठनों की मिठाई पड़े ।
गन्ध में दो निरन्तर चरण रेणु तूँ
बुद्धि में बस तुम्हें ही विचारा करूँ ॥ माँगता हूँ ...

• • •

याद में डूब जाऊँ सदा के लिए
प्रेम का गीत गाऊँ सदा के लिए ।
जो चलूँ या रुकूँ, बस तुम्हारे लिए
हाथ से पग दबाऊँ सदा के लिए
प्यारमय, प्यार के देवता, प्यार दो
प्यार में ही डुबो दो पुकारा करूँ ॥ माँगता हूँ ...

• • •

कंज उर का सजाऊँ सुलाऊँ तुझे
श्वॉस का वायु करके जुड़ाऊँ तुझे
खेलते हो बहुत खेल ही खेल में
खेलने के लिए मन चढ़ाऊँ तुझे ।
है तुम्हारे सिवा कुछ न मेरा कहीं
आँसुओं से कहो पग पखारा करूँ ॥ माँगता हूँ ...

• • •

रचयिता - डा० रामायण उपाध्याय

संकलयिता - शैलेन्द्र ओझा

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

यज्ञों की महिमा

- डा० सूर्यनारायण मिश्र

भारतीय संस्कृति और वेद पुराणों में यज्ञों की अपार महिमा निरुपित है। यज्ञ तो वेदों का मुख्य प्रतिपाद ही हैं। यज्ञों के द्वारा विश्वात्मा प्रभु को संतृप्त करने की विधि बतलाई गई है। परमात्मा यज्ञों के सहारे ही विश्व का संरक्षण करते हैं। यह एक विधान है जिसके द्वारा देवताओं को तृप्त कर यजमान अपने अभिलाषित आनन्द को प्राप्त करता है। स्वर्गलोक की प्राप्ति यज्ञानुष्ठान का मुख्य उद्देश्य होता है।

'यज्ञ' शब्द यज् धातु में नङ्-प्रत्यय जोड़ने से बनता है। यज अर्थात् "देवपूजा संगतिकरण दानेषु" अर्थात् देवपूजन, सत्संङ्ग और दान। इससे आध्यात्मिक, आधिदैविक एवं आधिभौतिक तीनों ताप अनायास समूल नष्ट हो जाते हैं। यज्ञ का मुख्य उद्देश्य देवाराधन है। यज्ञ के साथ वेदों का नीर क्षीर का संबंध है। यजुर्वेद यज्ञ का मापन करता है। ऋग्वेद और सामवेद यज्ञ में आहूत देवों की प्रसन्नता के लिये शस्त्र और स्तोत्र बतलाते हैं। अथर्ववेद यज्ञ में अनुशासन का पालन करवाता है। इस तरह यज्ञ का पूर्ण स्वरूप चारों वेदों से सम्पन्न किया जाता हे। यजुर्वेद से यज्ञ का स्वरूप-निर्धारण होता है। अतः याज्ञिक दृष्टि से यजुर्वेद का अपर नाम "अध्वर्युवेद" भी है।

महर्षि कात्यायन के अनुसार "द्रव्य देवता त्यागः में तीन यज्ञ के लक्षण हैं। द्रव्य में तेल, दही, दूध, सोमलता, चावल या जौ, भात, घी, कच्चा चावल, फल और जल - ये दश आते है। देवता तत्वतः मंत्र स्वरूप होते हैं। उनका अलग-अलग मंत्र होता है। त्याग में छोड़ना पड़ता है। चाहे द्रव्य हो, अन्नादि हो, दुर्गुण हो, काम क्रोध आदि षडरिपु हो।

मत्स्यपुराण के अनुसार पाँच उपादानों का संयोग ही यज्ञ है। जिस कर्म विशेष में देवता, हवनीयद्रव्य, वेदमंत्र, ऋत्विक एंव दक्षिणा का संयोग हो वही यज्ञ है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

"देवानां द्रव्यहविषं ऋक सामयजुषं तथा

ऋत्विजं दक्षिणानां च संयोगे यज्ञ उच्यते"

यज्ञ का प्रयोजन केवल वायुशुद्धि के लिये नहीं है । यज्ञ का आत्यन्तिक प्रयोजन है यज्ञकर्ता का देवताओं के साथ परस्पर भावन । अग्नि देवदूत या देवमुख का काम करते हैं । अग्नि का काम है जिन देवताओं के लिये अग्नि में जो-जो द्रव्य त्याग किया जाता है उसे उस देवता तक पहुँचा दे जिससे उनकी तृप्ति हो जाय । "अग्निर्हि देवतानां मुखम" (शतपथ ब्राह्मण) ।

मनुष्य को पग-पग पर दैवी सहायता की आवश्यकता है । और देवताओं को हवि के लिये मनुष्यों की ओर उन्मुख होना पड़ता है । इस तरह दोनों में परस्पर संबंध है । यज्ञ से देवता तृप्त होते है और फिर यजमान को तृप्त करते है । यज्ञ को शास्त्रों में साध्य धर्म माना है । "यज्ञे सर्व प्रतिष्ठि तस्माद्यज्ञ परमं वदन्ति" (महानारायणोनिषद) ।

यज्ञ वासुदेव स्वरूप है । "यज्ञो वैविष्णु" अर्थात् यज्ञ को विष्णु की संज्ञा दी गई है । वेद में यज्ञ को विश्व ब्रह्माण्ड के नियंत्रण में रखने वाल कहा गया है । ऐत्रेय ब्राह्मण में यज्ञाग्नि को ही विष्णु कहा गया हे । य शरीर यज्ञ के लिये है (गीता 4/21) अविनाशी परमात्मा की प्राप्ति होती है

यज्ञ तीन प्रकार के होते हैं- सात्विक, राजस, तामस (गीता 17-11-13 केवल कर्तव्य बुद्धि से, फलेच्छा रहित, मनुष्यों द्वारा जो शास्त्र विहित निय यज्ञ किया जाताहै वह सात्विक है । जो यज्ञ फल की इच्छा लेकर अप दम्भ या दिखावटीपन के लिये किया जाता है वह राजस है और शास्त्रवि से हीन अन्नदान से रहित, बिना मंत्रो के, बिना दक्षिणा के और बिना श्र के किये जाने वाले यज्ञ तामस कहलाते है ।

ईश्वर के प्रति पूर्ण समर्पण भी एक यज्ञ है । पति-पत्नी जब अप अहंकार छोड़कर एक-दूसरे को समर्पित हो जाते हैं, दोनों एक-दूसरे दुःख-सुख में शामिल होते है, सन्तान का पालन पोषण आदि करते हैं-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

यह भी एक यज्ञ ही है । मनुष्य कर्म से मुक्त हो सके इसके लिये यज्ञादि श्रेष्ट कर्मों से पृथक और कोई मार्ग नहीं है । मुण्डकोप निषद में (1/2/7) यज्ञ को संसार सागर से पार (मुक्ति) होने के लिये 'प्लव' अर्थात नौका कहा गया है ।

द्रव्ययज्ञ, तपोयज्ञ, योगयज्ञ; स्वाध्याययज्ञ सभी यज्ञ ही हैं (गीता) । यज्ञ की सृष्टि सृष्टि के आदिकाल में हुई । ब्रह्मा जी ने सृष्टि के साथ यज्ञ को भी बनाया यजुर्वेद के 'पुरुषसूक्त' (यजु० 31/6-9) में कहा गया है कि सबसे पहले यज्ञ पुरुष ही हुए । उन्हीं से दही, घी आदि उत्पन्न हुआ और वायु में, वन मे, एवं ग्राम में रहने वाले योग्य पशु उत्पन्न हुए । फिर उसी यज्ञ पुरुष के ऋग्वेद एवं सामवेद के मंत्र तथा यजुर्वेद के मंत्र और छन्द उत्पन्न हुए । उन्हीं से घोड़ा, गाय, भेड़, बकरियाँ आदि उत्पन्न हुई । देवताओं, साध्यों तथा ऋषियों ने उस यज्ञ पुरुष का यजन किया इससे धर्म की उत्पत्ति हुई । अत: यज्ञ आदिकाल से है ।

सृष्टि रचनाकाल के समय ब्रह्माजी ने सम्पूर्ण प्राणियों की उन्नति के लिये मनुष्यों को अपने-अपने कर्म रूपी यज्ञ के पालन का आदेश दिया और उस यज्ञ द्वारा इच्छित कामनाओं की प्राप्ति होती है । अगर देवताओं को हवि न मिले तो उनकी पुष्टि नहीं होती और कई तरह के विप्लव संसार में आ जाते हैं, जैसे अनावृष्टि, अतिवृष्टि, भूकम्प, दुर्भिक्ष आदि । देवता ही मनुष्य को यज्ञ करने की आवश्यक सामग्री देते हैं । अगर मनुष्य इन सामग्रियों को दूसरों की भलाई में न लगाकर (जल, अन्न, वस्त्र आदि) अपने ही स्वार्थ में लगाता है तो वह निश्चय ही चोर कहा जायगा और पाप का भागी बनेगा ।

हमारे यहाँ यज्ञमय जीवन जीने वाले बहुत हुए हैं । अगर देखा जाय तो श्री राम का सारा जीवन यज्ञ के लिये व्यतीत हो गया । उनका जन्म हुआ पुत्रेष्टि यज्ञ से, उन्होंने विश्वामित्र जी की यज्ञ रक्षा की एवं यज्ञादि वातावरण बनाया, फिर विवाह भी धनुष यज्ञ से हुआ, असली सीता को अग्नि यज्ञ भगवान को सुपुर्द कर नकली सीता लिया, रावण वध के बाद सीता जी की यज्ञाग्नि परीक्षा ली गई । जब राम राजा हो गये तो उन्होंने कई अश्वमेध यज्ञ

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

किये । इत तरह श्री राम का जीवन जन्म से अन्त तक यज्ञमय रहा ।

यज्ञ में ब्रह्म प्रतिष्ठित हैं । इस जगत में सम्पूर्ण प्राणी अन्न से उत्पन्न होते हैं, अन्न के लिये वर्षा जरूरी है, वर्षा यज्ञ से ही होता है, यज्ञ कर्मों से होता है, कर्म वेद से और वेद अक्षर ब्रह्म से प्रकट हुआ होता है । अतः ब्रह्म नित्य प्रतिष्ठित है ।

भगवद गीता के अनुसार कर्तव्य कर्म का नाम ही यज्ञ है । यज्ञ शब्द के अन्तर्गत यज्ञ, धन, तप, होम, तीर्थ सेवन, व्रत, वेदाध्ययन आदि समस्त शारीरिक, व्यावहारिक और परमार्थिक क्रियाएँ आ जाती हैं । कर्तव्य मानकर किये जाने वाले व्यापार, नौकरी, अध्ययन, अध्यापन आदि सब शास्त्र विहित कर्मों का नाम यज्ञ है । यज्ञार्थ कर्म अर्थात् दूसरों को सुख पहुँचाना, उसका हित करना । इससे आसक्ति मिटती है । गीता के अनुसार यज्ञ सिर्फ हवन क्रिया नहीं है, परन्तु शास्त्र विधि से की जानेवाली सम्पूर्ण विविध क्रियाओं का वाचक यज्ञ है । कर्तव्य समझकर निष्काम भाव से किये जाने वाले लौकिक एवं शास्त्रीय सभी विहित कर्मों का नाम यज्ञ है । ब्रह्मचारी का अग्नि होत्र स्त्रियों की रसोई, वैद्य का वैद्यकर्म, विद्यार्थी का अध्ययन, व्यापारियों का व्यापार सभी यज्ञ स्वरूप हैं ।

परमात्मा सर्वगत होते हुए भी यज्ञ से ही प्राप्त होते हैं । "यज्ञ कर्म समुद्भव" सभी यज्ञों में त्याग की मुख्यता होती है । हवन (आहुति) में अन्न घी का त्याग, दान में वस्तु का त्याग, तप में सुखभोग का त्याग और कर्तव्य कर्म में स्वार्थ का त्याग । यज्ञ में देना ही देना होता है । लेना होता है सिर्फ निर्वाह के लिये ।

रामायण की सीता एवं महाभारत की द्रौपदी दोनों ही यज्ञ से पैदा हुई । राजा जनक के हल जोतने के यज्ञ से सीत से सीता निकली और राजा द्रुपद के यज्ञ कुण्ड से द्रौपदी प्रगट हुई । ये दोनों यज्ञ की अनुकृतियाँ थीं, यज्ञ की प्रतिक्रिया थीं, यज्ञ की वरदान थीं । भगवान कृष्ण का भी सारा जीवन यज्ञीय प्रक्रिया में बीत गया । पांडवों के राजसूय यज्ञ में उन्होंने पैर धोने एवं ... उठाने का कार्य अपने संभाला । इससे वातावरण के ...

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

गीता के वचनों के अनुसार (गीता 3/10-15) मनुष्य कई भाव से यज्ञ करते हैं । कुछ लोग अर्पण (अर्थात् स्रुवा आदि), हवि (हवन करने योग्य द्रव्य) अग्नि, कर्त्ता, हवनक्रिया, कर्म सभी को ब्रह्म समझकर हवन् करते हैं। दूसरे योगीजन देवताओं के पूजन को यज्ञ समझते हैं । कुछ ज्ञानी लोग परब्रह्म परमात्मा में ज्ञान द्वारा एकीभाव से स्थित होकर, ब्रह्म रूप अग्नि में यज्ञ के द्वारा यज्ञ हवन करते हैं । कुछ लोग इन्द्रियों को विषयों से रोककर अपने वश में कर लेते हैं । और कुछ अन्य योगीजन राग द्वेष रहित इन्द्रियों द्वारा विषयों को ग्रहण करते हुए भी यज्ञ में भस्म करते हैं । कुछ योगीजन सच्चिदानन्द परमात्मा के सिवा अन्य किसी का चिन्तन नहीं करते-यही उनका हवन या यज्ञ होता है । दूसरे कई पुरुष ईश्वर अर्पण वुद्धि से लोकसेवा में अपना द्रव्य लगाते हैं (जैसे कुँआ, तालाब, अस्पताल, धर्मशाला, स्कूल आदि) । वैसे ही कई स्वधर्म पालन रूप 'तप यज्ञ' करते है । कुछ लोग अष्टांगयोग यज्ञ करते हैं । कुछ भगवान का नामजप करते है एवं कुछ स्वाध्यायरूपी ज्ञानयज्ञ करते हैं । कुछ अपान वायु में प्राण को हवन करते है, कुछ प्राण में अपान को हवन करते हैं, कुछ प्राण और अपान की गति रोककर प्राणायाम करते हैं। कुछ नियमित आहार करने वाले योगीजन प्राणों को प्राणों में ही हवन करते हैं । इन यज्ञों के परिणाम स्वरूप ज्ञानामृत को भोगने वाले (यज्ञनिष्ठ) योगीजन सनातन परब्रह्म परमात्मा को प्राप्त होते है । जो मनुष्य यज्ञ नहीं करता उसका मनुष्यलोक भी सुखदायक नहीं है, फिर परलोक कैसे सुखदायक होगा ? अर्थात् वह यहलोक और परलोक दोनो के सुख से वंचित हो जाता है ।

इन सबों में ज्ञानयज्ञ सबसे श्रेष्ट है । क्योंकि सम्पूर्ण कर्म ज्ञान में शेष हो जाते हैं अर्थात् ज्ञान उनकी पराकाष्ठा है । ज्ञान ही दण्ड है, ज्ञान ही शिखा है, ज्ञान ही यज्ञोपवीत है ।

'प्राणाग्निहोत्रोपनिषद' के अनुसार इस शरीर को भी यज्ञ कहा गया है। इस शरीर का यजमान आत्मा है । पानी (बुद्धि), होता (चित्त) ऋत्विक (वेद) अंध्वर्यु (अहंकार) ब्राह्मणच्छसी (प्राण) प्रतिप्रस्थान (अपान) प्रस्तोता

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2
(व्यान) उदगाता (उदान) मैत्रावरुण (समान) वेदी (शरीर) अन्तःवेदी (नाक) दोणकलश (सिर) रथ (पैर) स्रुवा (दाहिना हाथ) धृतपात्र (वांय हाथ) प्रणीता (कान) आज्य (आँख) धारा (गर्दन) खम्भा (ओंकार) रस्सी (आशा) पशु (काठ) यज्ञपात्र (इन्द्रियाँ) हवि (कर्मेन्द्रियाँ) इष्टिकाएँ (अहिंसा) दक्षिणा (त्याग) अवमृय स्नान (मृत्यु) है ।

यज्ञ सकाम और निष्काम होते हैं । सकाम से स्वर्ग की प्राप्ति होती है और निष्काम से मोक्ष मिलता हे । यह मारक एवं संवर्धक भी होता है रोग निवारण, रोग विषाणुओं को मारना, बीमारियों को मारना, अवांछनीय का विनाश आदि मारक यज्ञ है । श्रेष्ठताओं का बढ़ाना, वातावरण संशोधन वायु का शुद्ध करना सभी संवर्धक है । भगवान जब अवतार लेते हैं तो "परित्राणाय साधूनां" (संवर्धन) ("विनाशाय च दृष्कृताम" (मारण) शतपथ-ब्राह्मण में यज्ञों के नाना रूपों तथा विविध अनुष्ठानों का निरूपण है इसमें यज्ञ को जीवन का सबसे महत्त्वपूर्ण कृत्य बतलाया गया है । "यज्ञो वै श्रेष्ठतमं कर्म" (1/7/3/5) तदनुसार जगत अग्नीषोमात्मक है । सोम अन्न है और अग्नि अन्नाद । अग्नि रूपी अन्नाद सोमरूपी अन्न की आहुति ग्रहण करता है । यही क्रिया जगत में सतत विद्यमान है ।

शतपथ ब्राह्मण के ही एक रूपक के अनुसार यज्ञ पुरुष है, हविर्धान उसका सिर, आहवनीय मुख, आग्नीध्रीय तथा मार्जालीय दोनों वाहुए है । इस प्रकार यज्ञ का दैविक स्वरूप निर्धारित किया गया है । (श०ब्रा० 3/5/3/1 3/5/4/1)

कालिका पुराण के अनुसार "सर्व यज्ञमयं जगत" । यह सम्पूर्ण जगत यज्ञमय है । इसमें होने वाले समस्त कर्म यज्ञमय हैं जो सदा सर्वदा सर्वत्र होते रहते हैं । जैसे संध्या, तर्पण, बलिवैश्वदेव, देवपूजन, अतिथि सत्कार, व्रत, जप, तप, कथा श्रवण, तीर्थयात्रा, अध्ययन एवं अध्यापन, खान पान, शयन जागरण आदि नित्य और उपनयन, विवाह आदि नैमित्तिक एवं पुत्रेष्टि, राज्यप्राप्ति आदि काम्यकर्म ये सभी व्यवहार यज्ञ स्वरूप ही हैं । जीवन मरण को भी यज्ञ स्वरूप दिया गया है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अपने वर्ण, आश्रम, धर्म, जाति, स्वभाव, देश, काल आदि के अनुसार प्राप्त कर्त्तव्य कर्म "यज्ञ" के अन्तर्गत आते हैं। दूसरों के हित की भावना से किये जाने वाले सभी कर्म यज्ञ है। जिस कर्म में स्वार्थ की भावना छिपी रहे उसे यज्ञार्थ कर्म नहीं कहते।

हमारे पास जो कुछ भी सामग्री, बल, योग्यता, पद, अधिकार, धन, सम्पत्ति आदि है वह सब की सब हमें दूसरों से ही मिली हैं। इसलिये उनकी दूसरों की सेवा में ही लगाना चाहिये।

देवता, ऋषि, पितर, पशुपक्षी, वृक्षलता आदि सभी का स्वभाव परोपकार है। मनुष्य इनका सहयोग पाने के कारण इनका ऋणी है। इस ऋण से मुक्त होने के लिये पंच महायज्ञ आवश्यक हैं (ये पंचमहायज्ञ हैं - ऋषि यज्ञ, देवयज्ञ, भूतयज्ञ, पितृयज्ञ और मनुष्ययज्ञ। जो लोग सृष्टिचक्र के अनुसार नहीं चलता है वह चोर है, वे पाप खाते हैं तथा पापायु और इन्द्रियाराग हैं।

निःस्वार्थ भाव से केवल दूसरों के हित के लिये कर्म करते चलें यह यज्ञ है। जो मनुष्य यज्ञ के लिये ही सम्पूर्ण कर्म करता है, वह कर्म बन्धन से मुक्त हो जाता है। दूसरे जो ऐसा नहीं करते वे कर्मबन्धन में बंधते हैं।

यज्ञ के उपकरण - ज्योतिष शास्त्र के अनुसार शुभ दिन, नक्षत्र, तिथि, वार आदि चुन लें। फिर धर्मशास्त्रोक्त शुभ स्थान का चयन करें। यज्ञस्थली आधिभौतिकलोक के मध्य एक आदिदैविक द्वीप के समान है। यज्ञ की वेदी, हवि, यज्ञपात्र तथा अन्य उपकरण सबके सब अभिमंत्रित होने के कारण देवमय हो जाते हैं। इस दिव्य परिस्थिति के मध्य में बैठे यजमान, उनकी पत्नी तथा विभिन्न ऋत्विक भी देवमय हो जाते हैं। यज्ञस्थली के आसपास खुली जगह रहनी चाहिये जिससे भीड़ होने पर लोगों के आवागमन में कष्ट न हो। साथ ही स्नान, शौच, भोजन आदि की उचित व्यवस्था रहनी चाहिये। बाहर से आये अतिथियो, पंडितो एवं संतों के रहने के लिये फूस की झोपड़ी या टेन्ट की व्यवस्था होनी चाहिये। उस अहाते में कुछ धार्मिक पुस्तके, पूजा की सामग्री, माला आदि विक्रय की व्यवस्था रहनी चाहिये। यज्ञस्थली किसी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मंदिर या पुण्य सलिला नदी के किनारे हो तो अच्छा है । एक प्रवचन पंडा हो जिसमें सत महात्माओं का नित्य दिन प्रवचन होता रहे एवं भजन कीर्त चलता रहे । दूरभाष की व्यवस्था हो ताकि मंत्रोच्चार एवं कीर्त्तन, प्रवच आदि दूरस्थ लोग भी सुन सकें ।

यज्ञ मण्डप - मण्डप तीन प्रकार के होते हैं । उत्तम (16 हाथ X 16 हा X 1 हाथ ऊँचा), मध्यम (14 हाथ X 14 हाथ X 1 हाथ ऊँचा) अधम (1 हाथ X 12 हाथ X 1 हाथ ऊँचा) इमसें 16 खम्भे होने चाहिये । मण्डप चार द्वार होने चाहिये । प्रत्येक द्वार का माप मण्डप का पंचमाश होना चाहिये चार तोरण चारों दिशाओं में बाँधा जाय । यह विघ्न शान्ति के लिये है । तोर के मध्य में एक हाथ का त्रिशूल अंकित होना चाहिये । मण्डप की द दिशाओं में ध्वजा बांधनी चाहिये । मण्डप को पूर्ण रूपेण सुसज्जित का चाहिये । मंडप के चारों ओर कलश रखनी चाहिये । सभी कलशों पर द अक्षत, सिन्दूर होना चाहिये । मण्डप के अन्तर्गत होम कुण्ड का निर्माण हो

वेदी - यह मण्डप के मान का 1/3 चौड़ी और एक हाथ ऊँची हो । समतल होनी चाहिये, कच्चे ईंट का इस्तमाल हो सकता है । स्तम्भों को ल कपड़े से लपेट दें ।

कुण्ड - कुण्ड एक गढ्ढे की तरह होता है जिसमें अग्नि रहती है अ जिसमें आहुति दी जाती है । कुण्ड में नाभि, मेखला, योनि नाल आदि यु रहना चाहिये । नौ कुण्ड उत्तम होता है । यों तो यज्ञकुण्ड दस प्रकार के हैं । (1) चौकोर (2) वृत्त (3) पद्म (4) अर्धचन्द्र (5) योनिकी आक (6) चन्द्राकार (7) पंच कोण (8) सप्तकोण (9) अष्ट कोण अ (10) नौ कोणों वाला । कुण्डों का शास्त्रानुसार संस्कार होना चाहिये । बि संस्कार किये होम करने पर अर्थ हानि होती है । कुण्ड स्थान का अठ संस्कार होते है । कामना भेद से कुण्ड के अनेक प्रकार होते हैं ।

यजमान - जो यज्ञ करता है । पति-पत्नी दोनों मिलकर यज्ञ करते हैं

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

स्रुवा - सोना, चाँदी, ताँबा, लोहा या लकड़ी का होंना चाहिये । लकड़ी में शिरीष, शाखी, खीरी, बरगद आदि का हो । विल्व और खदिर की लकड़ी भी निर्माण में आती है । आँवला और केशर भी प्रशस्त है ।

हवन द्रव्य - वे पदार्थ जो हवनाग्नि में आहुत दी जाती है । इनका निश्चित प्रमाण होता है । शास्त्र के अनुसार प्रमाण जान लेना चाहिये । इसमें घी, दूध, पंच गव्य, दधि, मधु, गुड़, ईख, पत्र-पुष्प, सुपारी समिध, व्रीहि, डंठल के साथ जपा पुष्प और केसर, कमल, जीवन्ती, मातुलिंग (विजौरा) नींबू, नारियल, कुष्माण्ड, ककड़ी, गुरुच, दूव, भूर्जपत्र, शमी, समिधा, तीन पत्ते वाले विल्वपत्र आदि व्यवहृत होते है । इसके अलावे पायस, तिल, जौ, गुग्गुल, लालफूल, नागवल्ली, दूधभात, गोरोचन, श्वेत चन्दन, पूआ (पूरी), कर्पूर, चन्दन, कस्तुरी, कंकुम आदि ।

दर्वी (करछुल) - यह बारह अंगुली की बननी चाहिये । यह स्वर्ण या ताँवा का हो । काष्ट में गंभारी वृक्ष, तेदुका वृक्ष और दूध वाले वृक्ष से भी बना सकते हैं ।

पूर्नाहुति - यह खड़ा होकर किया जाता है । इसके अनुष्ठान से यज्ञ पूर्ण होता है । पूर्णाहुति के बाद यज्ञ में आवाहित देवताओं को अर्घ्य देना चाहिये । यदि यज्ञ अपूर्ण रहा तो यजमान श्री विहीन हो जाता है और यज्ञ पूर्ण फलप्रद नहीं होता । इसकी समाप्ति पर ब्राह्मणों को भोजन करावें ।

ऋत्विक ब्राह्मण - इनका वरण किया जाता है । इनकी संख्या अभीष्ठ होमानुसार करनी चाहिये । प्रयत्लपूर्वक उनकी पूजा कर एवं दक्षिणा प्रदान कर उन्हें संतुष्ट करना चाहिये । ऋत्विज ब्राह्मणों के अभाव में आचार्य भी होता बन सकता है । ब्राह्मण लोगों को शान्त एवं काम क्रोध रहित होना चाहिये । ये सभी ब्राह्मण शुद्ध, पवित्र, उत्तम लक्षणों से सम्पन्न एवं वेद मंत्रों में पारंगत होना चाहिये । इसी में एक जापक भी रहेगा जिसका काम जप करते रहना होगा । मृतभार्यावाला, कृपण, शूद्र के घर रहने वाला, बौना, वृषलिपति, बन्धुद्वेषी, गुरुद्वेषी, स्त्रीद्वेषी, हीनांग, अधिकांग, भग्नदन्त, दाम्भिक, प्रतिग्राहीं, कुनखी, व्यभिचारी, कुष्टी, निद्रालू व्यसनी, अदीक्षित, महाब्रजी, अपुत्र तथा

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

केवल अपना ही भरण पोषण करनेवाले - ये सब यज्ञ के पात्र नहीं है । अ
इनका वरण न करें ।

दक्षिणा - शास्त्रविहित यज्ञादि कर्म दक्षिणा रहित एवं परिमाण विहीन क
नहीं करना चाहिये । ऐसा यज्ञ कभी सफल नहीं होता । यज्ञ, दान और
आदि कर्मों में दक्षिणा तत्काल देनी चाहिये । सुवर्ण ही दक्षिणा सर्वोत्तम
रत्न, चाँदी, भूमिदान भी विहित है । विधान के अनुसार नियत दक्षिणा
में असमर्थ होने पर यज्ञ कार्य की सिद्धि के लिये देव प्रतिमा, पुस्तक, र
गाय, धान्य, तिल, रुद्राक्ष, फल एवं पुष्प आदि भी दिये जा सकते हैं ।

कलश - यह मिट्टी के घड़े का होता है । यज्ञ शुरू होने से पूर्व श्रद्धालु
गंगा स्नान कर, कलश को धो, उसमें गंगाजल भरते है और सिर पर क
रखकर एक साथ जय जयकार करते हुए यज्ञस्थली पर पहुँचते हैं । क
से मंगल होता है । इसमें अक्षत पुष्पों से देवताओं का आवाहन कर उ
पूजन किया जाता है । प्रचलित परम्परा में आम, पीपल, बरगद, पाक
गूलर- ये पाँच पंच पल्लव कहे जाते हैं । कलश में सप्तमिट्टी छोड़े (प
शिखर, गजशाला, वल्मीक, नदी संगम, राजद्वार, चौराहा, कुश कामूल)
उसमें सात वनस्पतियों को छोड़े (पारिजात, कृष्ण शंखपुष्पी, आमला, ख
मालती, चंपक तथा ककड़ी) कलश के उपर श्रीफल, नारिकेल, दाड़िम
तथा जम्बूफल रखे । कलश में स्वर्ण आदि पंचरत्न दिया जाता है । वरुण
आवाहन करे । गन्ध, पुष्प आदि से पूंजन करे । फिर कलश का स्पर्श क
हुए समस्त समुद्रों, तीर्थों, गंगा आदि नदियों, तथा पवित्र जलाशयों आदि
पवित्र जल की भावना कर उनका आवाहन करे । अन्त में आचार्य
ऋत्विक मिलकर यजमान पर कलश जल से अभिषेक करे ।

आहुति (हवन) - यज्ञों में आहुतियों की संख्या का अलग-अलग वि
है । विधि प्रमाण के अनुसार से आहुत देनी चाहिये । मानरहित हवन
से कोई फल नहीं मिलता । अतः मान का पूर्ण ज्ञान रखना चाहिये ।
यज्ञ का जितना मान होता है उसी मान की योजना करनी चाहिये । पचा
लेकर सौ, हजार अयुत, (दश हजार), लक्ष, कोटि होम भी होते हैं ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2
के उदर में अर्थात् मध्य में आहुति देनी चाहिये । इधर-उधर नहीं देनी चाहिये । चन्दन, अगर, कपूर, पाटला और जूही के समान अग्नि में प्रादुर्भूत गन्ध सभी प्रकार का कल्याण कारक होता है ।

अग्नि - यज्ञों में अरणी मंथन से अग्नि उत्पन्न किया जाता है । शुद्ध एवं पवित्र व्यक्ति द्वारा अग्नि ग्रहण करना चाहिये । स्त्री के द्वारा अग्नि नहीं मंगवाना चाहिये । तदन्तर अग्नि का संस्कार हो और उसे अभिमुख रखे । फिर वायु के सहाये अग्नि प्रज्वलित करे । फिर अग्नि पूजन हो (षोड़शोपचार से) । अग्नि के मुख में मंत्रोच्चारण पूर्वक आहुति पड़ने पर अग्नि देवता सभी प्रकार का अभ्युदय करते हैं । मुख के अतिरिक्त शेष स्थानों पर आहुति देने से अनिष्ट फल होता है । अग्नि का बुझ जाना एवं अत्यन्त धुआँ होना दोनों अनिष्ट कारक है । ऐसी स्थिति में प्रायश्चित का विधान है ।

बलि (बलिदान) - यज्ञ में बलि के बिना यज्ञ पूरा नहीं होता । पूर्व काल में बलि के नाम पर पशु काटे जाते थे - गोमेध, अश्वमेध, नरमेध, अजमेध आदि अभी भी कुछ मंदिरो मे था - देवस्थलो पर पशुबलि दी जाती है । यज्ञ में बलि दिये बिना देवता प्रसन्न नहीं होते । बलि का अर्थ होता है जिसमें आदमी अपने दोष और दुर्गणों को छोड़ दे, त्याग दे । जानवर प्रतीक मात्र होते हैं । निष्ठुरता को अज कहते हैं, इन्द्रिय विकार को गो । अतः इन विकारो को छोड़ने को ही बलि कहते थे । एक-दूसरा अर्थ बलि का यह है कि यह देवताओं को उपहार रूप में दिया जाता है । आवाहित देवता को विदाई में कुछ भेंट उपहार तो मिलना ही चाहिये । नहीं तो वे अप्रसन्न हो जायेंगे । अब बलिदान शब्द को हटाकर लोग "देव दक्षिणा" का नाम दिये हैं । आज कुछ लोग खीर, उड़द (मांस) लालरंग, दही, कचौड़ी, पापड़ आदि ही बलि देते हैं । खीर, कुष्मांड, नारियल, बेल आदि की भी बलि दी जाती है । बलिदान में बलिपात्र में सब सामान रखकर उसमें सिन्दूर एवं कज्जल जगाया जाता है । दीपक जलाकर हर देवता का मंत्र पढ़कर बलि दी जाती है और मन में यह भावना की जाती है कि देवता उनके बलि को ग्रहण कर रहे हैं ।

देवता - जिस किसी देवी या देवता का यज्ञ किया जाता है उसकी एक भव्य

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2
मूर्ति यज्ञ मण्डप में होनी चाहिये । इसकी विधिवत षोडशोपचार पूजन होनी चाहिये । सुबह शाम आरती हो । स्तोत्र आदि का पाठ हो ।

मंत्र - देवताओं के अलग-अलग मंत्र होते हैं । देवता मंत्र के अधीन होते हैं जिस देवता के लिये यज्ञ किया जाता हो उसे देवता के मंत्र से आहुति दी जाती है । एक जापक इस मंत्र का जप करता रहता है ।

यज्ञों के भेद-प्रभेद - वेदों में, समस्त ब्राह्मण ग्रन्थों में एवं श्रौत सूत्रों में यज्ञ के अनेक भेद-प्रभेद बताये गये हैं । सृष्टि के साथ-साथ यज्ञ आये और अबतक इतने यज्ञादि हो चुके हैं कि सबका विवरण असम्भव-सा है । बहुत से यज्ञ इस कलियुग में प्रतिबंधित हैं, नहीं किये जाते हैं । वर्तमान समय के कुछ प्रचलित यज्ञों में रुद्रयाग, महारुद्रयाग अतिरुद्रयाग, विष्णुयाग, सूर्ययाग गणेशयाग, लक्ष्मीयाग, शतचण्डीयाग, सहस्ताचण्डीयाग, अयुतचण्डीयाग लक्षचण्डी- याग, महाशान्तियाग, कोटिहोम, भागवत सप्ताहयज्ञ आदि विशेष प्रचलित है ।

यों तो यज्ञ मुख्यत: पाँच प्रकार के हैं (1) अग्निहोत्र (2) दर्शपूर्णमास (3) चातुर्मास्य (4) पशुयाग (5) सोमयाग । सभी यज्ञों में सोमयाग सबसे श्रेष्ठ है । गौतम धर्मसूत्र में कहा गया है कि यज्ञ मुख्यत: तीन प्रकार के होते हैं (1) पाकयज्ञ (2) हर्वियज्ञ (3) सोमयज्ञ । हरएक में सात सात यज्ञ होते हैं ।

पाकयज्ञ - के अन्तर्गत सप्त संस्थाओं का उल्लेख मिलता है । ये हैं

(1) अष्टका श्राद्ध - यह मार्गशीर्ष, पौष और माघ इनतीन मासों की कृष्णाष्टमियों पर सम्पन्न होता है । इसमें पितरो का श्राद्ध करने का बड़ा माहात्म्य है ।

(2) पार्वण श्राद्ध - यह पर्व पर्व पर या पितरों की निधन तिथि पर अथवा महीने महीने पर होता है । एकोदिष्ट आदि भी इसी के अंदर है ।

(3) श्रावणी - श्रावणी पूर्णिमा को होनेवाले सर्पबलि, गृह्यकर्म, रक्षाबन्धन आदि श्रावणी कर्म में गिना गया है ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(4) आग्रहायणी- इसमें सर्पबलि, स्थाली पाक पूर्व श्रावणी के समान ही आग्याहुति और स्विष्टकृत-हवन्, एवं भूशयन कार्य होता है।

(5) चैत्री - इसमें शूलग कर्म (वृषोत्सर्ग) किया जाता है। यह स्वर्ग, पुत्र, धन, पशु, यश एवं आयु प्रदान करने वाला है। इसमें पशुपति रुद्र के लिये वृषभ (साँड़) छोड़े जाते हैं।

(6) आश्रयुजी - इसका पूरा नाम पृषातक यज्ञ है। आश्विन पुर्णिमा को दधि-मधु से हवन किया जाता है। बाद में ब्राह्मण भोजन।

हविर्यज्ञ - इसमें भी सात यज्ञ प्रकारों का उल्लेख मिलता है।

(1) आगयाधेय - यह 13 रात्रियों तक चलता है। धृत तथा दुग्ध के द्वारा प्रतिदिन हवन किये जाने को 'अग्निहोम' कहा जाता है।

(2) पिण्ड-पितृ-यज्ञ - उपर का ही एक भेद है। इसका विधान श्राद्ध की तरह होता है।

(3) दर्श पौर्णमास - यह प्रत्येक अमावास्या और पूर्णिमा को अनुष्ठित होता है। प्रकृति रूप में होने के कारण इसी यज्ञ का पहले विधान हुआ। इस यज्ञ में उपवास करके यजमान और उसकी पत्नी को संयमपूर्वक रात्रि व्यतीत करनी पड़ती हे। दूसरे दिन यज्ञ का सर्वाङ्ग अनुष्ठान किया जाता है। इसमें कुल छः याग होते हैं। अमावास्या को तीन याग और पूर्णिमासी को तीन याग।

(4) आग्रायण - इसमें साँवा नामक धान्य विशेष से चरु बनाकर चन्द्रमा को आहुतियाँ की जाती है। आयुष्य कामेष्टि, पुत्रकामेष्टि और मित्रविन्दा आदि इसी के भेद हैं।

(5) चातुर्मास्य - यह चार-चार मासों में अनुष्ठेय है। इसके चार भेद है।

(6) निरुठ पशुबन्ध - यह वर्षा ऋतु में होता है। इन्द्र और अग्नि के नाम हवन होता है। यह पशुयाग के अन्तर्गत है।

(7) सौत्रामणि - यह भी पशुयाग के अन्तर्गत है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2
सोमयज्ञ - यह आर्यों का अत्यन्त प्रसिद्ध याग रहा है । अग्नि में सोमलता के रस की आहुति देनें के कारण यह सोमयाग कहलाता है । इनके भी 7 प्रकार है - (1) अग्निष्टोम (2) अन्यग्निष्टोम (3) उक्थ्य (4) षोडशी (5) वाजपेय (6) अतिरात्र (7) आप्तोर्याम । इसके अन्य बहुत से उपभेद भी हैं ।

वाजपेययज्ञ - यह आधिपत्य की कामना से किया जाता है । यह बड़ा महत्वपूर्ण है । यह उत्तरा फाल्गुनी नक्षत्रयुक्त पूर्णिमा तिथि को आरम्भ होता है । इस यज्ञ की 17 दीक्षायें होती है । इस यज्ञ को सम्पादित करने से राजा सभी पापों से मुक्त हो जाता है, ऐसा पुराणों में कहा गया है ।

राजसूय यज्ञ - धर्मात्मा युधिष्ठिर ने यह यज्ञ किया था जिसमें स्वयं भगवान कृष्ण ने पत्तल उठाने एवं पैर धोने का काम लिया था । यह चक्रवर्ती सम्राट किया करते थे । राजनीतिक समस्याओं का समाधान इससे मिलता था ।

विश्वजित् यज्ञ - यह सारी कामनाओं को पूर्ण करनेवाला बताया गया है । इसे सूर्यवंशी राजा रघु ने किया था ।

अश्वमेध यज्ञ - जो सभी कामनाओं को प्राप्त करके विश्वजयी होना चाहता है उसे अश्वमेध यज्ञ करना चाहिये । इसमें एक यज्ञीय अश्व छोड़ा जाता है और उसके पीछे राजा की सेना चलती है । वह जबतक लौटकर नहीं आता तबतक पारिप्लव आख्यान चलते हैं । राजा राम ने अश्वमेध यज्ञ किया था जिसमें लव और कुश से उनका सामना हुआ था । अन्य सूर्यवंशी राजाओं ने भी इस यज्ञ को किया । बनारस में एक "दशाश्वमेध घाट है" । यहाँ दस अश्वमेध यज्ञ हुए थे । यह यज्ञ सभी यज्ञो का राजा कहा जाता है ।

अनुष्ठान यज्ञ - जिसके द्वारा इन्द्रादि प्रसन्न हों, स्वर्गादि की प्राप्ति हो, तीनों प्रकार की विपत्तियाँ दूर हो (आध्यात्मिक, दैविक, भौतिक); सम्पूर्ण संसार का कल्याण हो ।

अग्निहोत्र - ब्राह्म (द्विज) को विधि पूर्वक आचमन करके अग्नि प्रज्वलित कर यथाविधि अग्नि में हवन करना चाहिये । यह सायं प्रातः दोनों काल होने

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

चाहिये । अगर किसी अपरिहार्य कारण से वह स्वयं न कर सके तो ऋत्विक का पुत्र, पत्नी, शिष्य या सहोदर भाई भी अग्निहोत्र कर सकता है । करने वाला यज्ञोपवीती हो । एकाग्रमन होकर इन्द्रियों को संयमित कर अग्नि में हवन करे ।

धनुष यज्ञ – राजा जनक ने अपनी पुत्री सीता की शादी के लिये यह यज्ञ किया । जो शिव धनुष को तोड़ेगा उसी से सीता का ब्याह होगा । बहुत से देश के राजा महाराजाओं ने अपना बल प्रदर्शित किया परन्तु धनुष को डोला न सके । तब राजाजनक की चिन्ता को देखते हुए विश्वामित्र जी ने राम से धनुष तोड़ने को कहा और बड़ी सरलता से राम ने धनुष तोड़ कर सीता जी से ब्याह किया ।

लयांग यज्ञ – इसमें अंगों का अंगी में लय होता है । इसमें अंगी को कारण और अंगों को कार्य माना जाता है । इस उपाधिभेद को हटाना ही लयांग पूजा है । ये अंग चार हैं शब्द, अर्थ, काल, देश ।

पंच महायज्ञ – गृहस्थ के घर में पाँच स्थल ऐसे है जहां प्रतिदिन न चाहने पर भी जीव हिंसा होने की सम्भावना रहती है । चूल्हा (अग्नि जलाने में), चक्की (पीसने में), बुहारी (बुहारने में), ऊखल (कूटने में), जल पात्र के नीचे जीवों के दब से जो पाप होते हैं, उन पापों से मुक्त होने के लिये पाँच यज्ञों का विधान है । (1) ब्रह्मयज्ञ (2) पितृयज्ञ (3) देवयज्ञ (4) भूतयज्ञ (5) मनुष्य यज्ञ

(1) ब्रह्मयज्ञ – संध्यावन्दन तथा वेद-वेदांगादि, पुराणादि आर्षग्रन्थों का स्वाध्याय अर्थात् पठन-पाठन नित्य प्रति करना चाहिये । समयाभाव में केवल गायत्री महामन्त्र के जप से भी पूर्ति हो जाती है ।

(2) पितृयज्ञ – इसमें श्राद्ध तथा तर्पण आता है । एक-एक पितर को तिल मिश्रित जलकी तीन-तीन अंजलियाँ प्रदान करे । तर्पण में देव तर्पण, ऋषितर्पण, दिव्य मनुष्य तर्पण, दिव्य पितृ तर्पण, यमतर्पण, मनुष्यपितृ तर्पण आदि आते हैं ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(3) देवयज्ञ - देवताओं का पूजन एवं हवन ।

(4) भूतयज्ञ - इसे बलि वैश्वदेव भी कहते हैं । मनुष्य के नित्य कर्मों में स्नान, संध्या, जप, देवपूजा, वैश्वदेव और अतिथि पूजा ये छः आते हैं । भोजन के लिये जो हविष्यान्न घर में पकाया जाता है उसी से वैश्वदेव करना चाहिये । अग्निकुण्ड प्रतिष्ठित कर उसमें घृताक्त अन्न की आहुतियाँ देनी चाहिये । इसके बाद पंचवलि दे । गो को (पत्ते पर) श्वान को (पत्ते पर) काकबलि (पृथ्वी पर) देवादिबलि (पत्ते पर) पिपीलिकादिवलि (पत्ते पर)

(5) अतिथियज्ञ - जिसके आने की तिथि न हो वह अतिथि है । सबसे पहले उनको ससम्मान भोजन कराना चाहिये । अभाव हो तो मीठी बातों से, चटाई बिछा कर बैठावे, जल देने से कार्य चल जाता है । अतिथियों को लौटाने से पाप लगता है अतिथि को नारायण समझे ।

जपयज्ञ - भगवान कृष्ण ने गीता में जप को अपनी विभूति बतलाया है । "यज्ञानां जपयज्ञोस्मि" । किसी मंत्र या नाम का बार-बार उच्चारण करना जप कहलाता है । जप तीन प्रकार का होता है । वाचिक (धीरे-धीरे बोलकर), उपांशु (जो दूसरा न सुन सके) मानसिक जप (जिसमें जीभ और ओष्ठ नहीं हिलते) तीनों जपों में पहले की अपेक्षा दूसरा और दूसरे की अपेक्षा तीसरा प्रकार श्रेष्ठ है । जप हाथ पर (करमाला) या किसी माला पर (रुद्राक्ष, चन्दन, स्फटिक, तुलसी आदि) किया जा सकता है । जप के समय हाथ को जप माली में डाल लेना चाहिये ।

सर्पयज्ञ - राजा परीक्षित की मृत्यु सर्पदंश से हुई थी । अतः उनके पुत्र जन्मेजय ने सर्पयज्ञ किया जिसमें जगह-जगह से सर्प आ आकर हवन कुण्ड में गिरने लगे । आस्तीक मुनि के कहने पर यह यज्ञ बन्द किया गया ।

दक्षयज्ञ - प्रजापति दक्ष ने एक यज्ञ का आयोजन किया जिसमें व्यक्तिगत शत्रुता के चलने शिव जी एवं सती को निमंत्रित नहीं किया गया । सती इस अपमान को वर्दास्त नहीं कर सकी और योगाग्नि से अपने को भस्म कर दिया । फिर शिव के गणों ने एवं वीरभद्र ने यज्ञ को विध्वंश कर डाला और

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2
दक्ष का सिर काटकर हवन कुण्ड में डाल दिया। बाद में शिव की प्रार्थना करने पर यज्ञ की समाप्ति के लिये शिव जी ने बकरे का सिर दक्ष के सर में जोड़ कर उसे पुनर्जीवित किया।

पुत्रेष्टि यज्ञ - राजा दशरथ ने पुत्र कामना में यह यज्ञ किया था जिसमें अग्नि देव हवन कुण्ड से चरू लेकर प्रकट हुए और वह चरू दशरथ की रानियों को दिया गया जिससे चार पुत्र हुए।

राजा द्रुपद ने भी पुत्र कामेष्टि यज्ञ किया था जिसमें यज्ञ से धृष्टद्युम्न (पुत्र) और द्रौपदी (पुत्री) प्रगट हुई थी।

अम्बायज्ञ - यह भगवान विष्णु द्वारा देवी को प्रसन्न करने के लिए किया गया था।

सृष्टियज्ञ - प्रजापति के प्राणाभिमानी भरद्वाज, कश्यप, गौतम, अत्रि, बसिष्ठ, विश्वामित्र और जमदग्नि आदि ऋषियों ने किया था-।

मानस यज्ञ - यह मोक्ष की कामना वाले मुनियों ओर विरक्तों द्वारा किया जाता है। इसमें सभी सामग्रियों की कल्पना की जाती है। मन ही होता और यजमान होता है। सनातन एवं निर्गुण ब्रह्म इसका अधिदेवता है। हवन सामग्रियों की आहुति अपने प्राणरूपी अग्नि में दी जाती है। कुण्डलिनी द्वारा उस प्राणाग्नि का भी शाश्वत अग्नि में होम होता है।

पूर्ण समर्पणयज्ञ - ईश्वर के प्रति मनसा, वाचा, कर्मणा पूर्ण समर्पण भी यज्ञ है।

सर्वतोभद्र यज्ञ - यह संसार की भलाई के लिये किया जाता है। देवताओं ने अन्धासुर को हराने के लिये इस यज्ञ का अनुष्ठान किया था।

राजा बलि का यज्ञ - राजा बलि ने एक सौ यज्ञ करने की ठानी थी। अन्तिम यज्ञ में भगवान विष्णु ब्राह्मण रूप धरकर आये और बलि से तीन पग पृथ्वी मांगकर उसका सर्वस्व छीन लिया एवं बलिको पाताल भेज दिया। इस तरह इन्द्र की सहायता की गई।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2
विश्वामित्र का यज्ञ - विश्वामित्र के यज्ञ में मारीच एवं सुबाहू राक्षस बाधा पहुंचाते थे । राजा दशरथ से मुनि ने राम लक्ष्मण को मांगा और उन दोनों ने उन राक्षसों से यज्ञ की रक्षा की जिससे यज्ञ सम्पन्न हुआ ।

माला को अनामिका अंगुली पर रखकर अंगूठे से स्पर्श करते हुए मध्यमा अंगुली से फेरना चाहिये । सुमेरू का उल्लंघन न करें । तर्जनी न लगावें । सुमेरू के पास से माला को घुमाकर दूसरी बार जपे । जप करते समय हिलना, डुलना बोलना निषिद्ध है । स्थान भेद से जप की श्रेष्ठता है। घर में एक गुना, गौशाला में सौ गुना, पुण्यमय वन या वाटिका तथा तीर्थ में हजार गुणा, पर्वत पर दस हजार गुना, नदीतट पर लाख गुना, देवालय में करोड़ गुणा तथा शिवलिंग के निकट अनन्त गुणा पुण्य प्राप्त होता है । सभी यज्ञों में जप अधिक श्रेष्ठ है । अन्य यज्ञों में हिंसा होती है, जप यज्ञ में नहीं।

मेघनाद का तंत्र यज्ञ - रावण पुत्र मेघनाद ने विजय की कामना से निकुम्मला तंत्र यज्ञ किया । इसके पूर्ण होने से वह अजय हो जाता । विभीषण की सलाह पर लक्ष्मण द्वारा यह यज्ञ पूर्ण होने के पहले ही असफल कर दिया गया । लक्ष्मण के हाथों मेघनाद की मृत्यु हुई ।

नामयज्ञ - भक्ति मार्ग में हविर्यज्ञ की अपेक्षा नामयज्ञ का विशेष महत्त्व है। भगवन्नाम की महिमा अपार है । नाम में एवं नामी में भेद नहीं होता । इस नामजप को सभी वर्ग के लोग कर सकते हैं । इसमें जाति पाति आदि का भेदभाव बिलकुल नहीं रहता । कलियुग में इससे बढ़कर भवसागर पार होने का दूसरा रास्ता नहीं है । अपने को चोबीश घंटा नाम जप में लगाये रखो ।

अश्रुयज्ञ - हमारे पूज्य गुरुदेव श्री रामानन्द शास्त्री जी 'आनन्द' कहा करते थे कि आँसू निर्धनों का धन है, भूखों का भोजन है, रोगियों की दवा है और भक्तों का सर्वस्व है । आँसू जन्म के साथ आता है और मरण के साथ जाता है । वह मुझे कभी नहीं छोड़ता । यह अज्ञानियों का अज्ञान बहा देता है । चिन्तालुओं की चिन्ता धो देता है । यह इष्ट को खींचकर ले आता है । आँसू सुख में और दुःख में दोनों में आता है । अश्रुयज्ञ का अर्थ आदान-प्रदान

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तुम्हें उन्हें हम देते है और वह आप अपने को । अश्रुधाराओं में वह बल है कि निस्सीम दुःखों के बीच घिरा मानव शीघ्र प्रभु कृपा प्राप्त कर लेता है यह अन्तः करण की मलिनता को धोकर अश्रुधारा के रूप में बाहर निकाल देता है । यह भागीरथी की जलधारा है जिससे अन्तःकरण शान्त हो जाता है। रागात्मिका भक्ति के लक्षण में अश्रु प्रपात भी बतलाया जाता है । अहं के रहते यह धारा नहीं निकल सकती । यह अहंवृति के नाश का सूचक है । अश्रुयज्ञ ही एक ऐसा साधन है जिससे प्रभु दर्शन दे ही देते हैं । यह अश्रुयज्ञ अभ्यास द्वारा सम्भव नहीं है । जब प्रेम की पराकाष्ठा होती है और व्यग्रता होती है तो यह स्वतः होता है ।

समाधि यज्ञ – समाधि एक यज्ञ है । इस अवस्था में ज्ञानेन्द्रियों एवं कमेन्द्रियो की क्रियाएँ रुक जाती हैं । इससे प्राणों की क्रियाएँ भी रुक जाती हैं । जैसे कुम्भक में मन को एकाग्र करना । इन्द्रियाँ सर्वथा निश्चल एवं शान्त हो जाती हैं ।

द्रव्य यज्ञ – संसार के हित के लिये कुआँ, तालाब, मंदिर, धर्मशाला बनाना तथा अभावग्रस्त को अन्न, वस्त्र, जल, औषध, पुस्तक आदि देना, दान करना आदि इसमें आते हैं ।

महायज्ञ – जीवमात्र की सेवा को हमारे यहाँ महायज्ञ कहा जाता है । यह भगवान की बहुत बड़ी पूजा मानी गयी है । इसे अवश्य कर्त्तव्य बतलाया गया है । पंचयज्ञ इसी को कहते हैं । प्राणियों की ही न ही इसमें पेड़-पौधों की सेवा एवं रक्षा का विधान है । देवता से लेकर छोटे-से-छोटे जीव तक की सेवा हिन्दु चेतना का अंग है । वह सिर्फ चेतन में ही नहीं बल्कि जड़ वस्तुओं मे भी भगवान को देखते हैं ।

ज्ञानयज्ञ – सभी उत्तम यज्ञों से उत्तम ज्ञान यज्ञ कहा गया है । द्रव्यमय यज्ञ से ज्ञानमय यज्ञ श्रेष्ठ है । सम्पूर्ण कर्म और पदार्थ ज्ञान (तत्व ज्ञान) में समाप्त हो जाता है । ज्ञानरूपी अग्नि सम्पूर्ण कर्मो को भष्म कर देती हे । द्रव्यमय यज्ञ समाप्त करके ही ज्ञानयज्ञ किया जाता है । इसमें विवेक-विचार की प्रधानता रहती है । ज्ञानियों एवं वैरागियों को यह करना उचित है ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

निष्काम कर्म यज्ञ – गीता में भगवान कृष्ण ने निष्काम सभी कर्मों को यज्ञ कहा है । अगर कुछ पाने की लालसा से कर्म किया जाता है तो वह बन्धन स्वरूप होता है वह यज्ञ नहीं है । बिना किसी चाह के परोपकार एवं कर्तव्य कर्म को करना ही यज्ञ है । ''कर्मण्येवाधिकारस्थे मा फलेषु कदाचन''

– (गीता) ।

इसमें दान, तप, होम, तीर्थ, व्रत, वेदाध्यन आदि सभी आ जाते हैं ।

ऊपर कुछ यज्ञों के वर्णन हैं । इसके अतिरिक्त और भी अनेको यज्ञ हैं जैसे नरमेध, सर्वमेध, एकाह अहीनयाग, तपोयज्ञ, योगयज्ञ, प्राणायाम यज्ञ आत्मयज्ञ, भावना यज्ञ आदि । सबों का वर्णन करने से लेख बहुत लम्बा हो जायगा अतः यहीं विराम दिया जाता है ।

डा0 सूर्य नारायण मिश्र
सेवानिवृत प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष
शल्य चिकित्सा विभाग
पटना मेडिकल कॉलेज
ओ–82, डाक्टर्स कॉलोनी, कंकड़बाग, पटना

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पतिव्रता वेश्या

डा० रामायण उपाध्याय से साभार प्राप्त

एक वेश्या थी जिसको एक अनिद्य सुन्दरी पुत्री उत्पन्न हुई। चन्द्रकला की भाँति वह दिनानुदिन बढ़ती गई। युवती होने पर उसके रूप की ख्याति चारों ओर फैल गयी। बड़े-बड़े राजा, सेठ, साहूकार, सामन्त आदि उसकी कृपा कटाक्ष के लिए तरसने लगे, किन्तु वह थी जो वेश्यावृत्ति से भागती थी। उसका स्वभाव ही वेश्यावृत्ति के विपरीत था। माँ ने उसे बहुत समझाया। उससे कहा - बेटी, जीने का साधन ही और क्या है ? यही परम्परा है हमलोगों की। यही जीविका है।

एक दिन किसी "पौराणिक पंडित के मुँह से वेश्या-पुत्री ने सुना, "पतिव्रत" धर्म में महती शक्ति है। सारी शक्तियाँ उससे हीन हैं। सृजन-संहार-पालन की समष्ट शक्ति है पतिव्रत धर्म में।

उसने पंडित जी से पूछा - प्रभो, मैं तो वेश्या-पुत्री हूँ। क्या मेरे भाग्य में इसतरह की शक्ति प्राप्त करने का विधान नहीं है ? पंडित जी ने उत्तर दिया - तुम्हारे पास प्रथम बार जो पुरुष आवे, उसी को रात भर के लिए अपना पति मानकर उसकी हार्दिक सेवा करो। पैसे का महत्व न दो, तुम्हारा कल्याण होगा।

वेश्या-पुत्री ने पंडित की बात की गांठ बाँध ली। तबसे, सबसे पहले जो पुरुष आता, चाहे जितना भी, कम भी पैसे देता, उसी को वह उस रात के लिए सर्वात्मना अपना पति मान लेती और विशुद्ध पति परायण की भाँति उसकी सेवा करती। अधिक-से-अधिक धन देने वालों को लौटना पड़ता। उसका यह अटल और दृढ व्रत चलता रहा।

भगवान को परीक्षा सूझी। एक नवयुवक के रूप में सबसे पहले एक कौड़ी लेकर उसके यहाँ पहुँचे। उसने उन्हें स्वीकार किया। जब रात हो गई तो युवक को हैजे की बीमारी हो गई। वह बार-बार उन्हें साफ करती, उनके

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

बिस्तर बदलती, किन्तु सारा घर गन्दा हो जाता । उसकी माँ ने आक बार-बार डाटा, कहा - इसको त्याग दो ।

माँ की बात अनसुनी करके वह उस युवक को भगवान मानकर सच्चे हृदय से उसकी सेवा करती रही ।

सूर्योदय के पूर्व उस युवक का देहावसान हो गया । वेश्या-पुत्री सती होने को तैयार हुई । माँ के साथ-साथ समग्र नगर ने, राजा, सेठ, सामन्त सबने उसे रोका किन्तु वह सती होने से नहीं डिगी ।

घाट पर चन्दन की चिता सज गई ।शृंगार करके वह युवक को अप अंक में लेकर चिता पर जलने के लिए बैठी और आग लगा दी गई तो सब आश्चर्यपूर्वक देखा कि आग बुझ गई, चिता गायब हो गई और वह सुन्दरी भगवान विष्णु से समालिंगित अर्द्धनारीश्वर की भाँति दृष्टिगोचर हुई ।

वेश्या-पुत्री प्रेमाधिक्य से द्रवित होकर धारा के रूप में बह गई उसका नाम पड़ा-गंडकी । कहते हैं तबसे भगवान सदा उसमें शालिग्राम रू से निवास करते हैं ।

वैदिक कामना

मेरा राष्ट्र वीरों से युक्त हो । धरा शस्य सम्पन्न रहे । पशुधन बढ़ रहे । परस्पर राग-द्वेष नहीं बढ़े । सभी एकत्र मिलकर राष्ट्रोन्नति की बातें सोंचे । सबकी बुद्धि विमल हो । सभी प्रतिभा सम्पन्न बनें राज्य-राज्य में कोई मूर्ख न रहे । सभी रक्षकों के अस्त्र-शस्त्र निशित र रहें । सभी निरर्थक चिन्तन छोड़ दें । कर्म - कला और ज्ञान की गति से भी उन्नतिशील बनें ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अद्वैतवाद का विजय पताका

- आचार्य श्याम नारायण झा

महर्षि कुमारिल भट्ट ने सम्पूर्ण वेद मंत्रों का सांगोपांग अध्ययन किया था। दर्शन शास्त्र के भी वे अद्वितीय विद्वान थे। मीमांसा दर्शन के वे अपने युग के सूर्य थे। महर्षि अपने समय के युग पुरुष थे। वे उत्तर भारत के तीत होते हैं।

उस समय भारत वर्ष में बौद्ध धर्म का अधिक प्रचार-प्रसार हो गया था। बौद्ध आचार्यगण कर्मकाण्ड पर आक्षेप करते थे। वैदिक कर्मकाण्ड में विरोधाभास मालूम पड़ने लगा था। कुमारिल भट्ट ने अपने प्रगाढ़ पांडित्य एवं प्रखर प्रतिभा से बौद्ध धर्म के आचार्यों को शास्त्रार्थ में पराजित किया। कर्मकाण्ड के विरोधाभासों का परिहार कर वेद प्रमाण्य बनाया तथा वैदिक कर्मकाण्ड की मौलिकता को, जो धूमिल हो रही थी, उसे स्वच्छ कर पुनः स्थापित किया। कुमारिल भट्ट ने बौद्ध आचार्यों से उनके विषय का अध्ययन किया और शास्त्रार्थ में वैदिक कर्मकाण्ड के पक्ष में उन्हें पराजित भी किया।

स्वरूपपस्थ योगीश्वर आचार्य रामानन्द शास्त्री 'आनन्द' के कथनानुसार-

बौद्ध आचार्यगण राजा को बौद्ध बनाकर उसके द्वारा सम्पूर्ण प्रजा को बौद्ध बनने के लिए बाध्य करते थे। विवश होकर प्रजा को बौद्ध बनना पड़ता था।

एक राजा स्वयं बौद्ध धर्म का अनुयायी हो गया था किन्तु उसकी पत्नी सनातन धर्मावलम्बी थी।

राजा ने पत्नी से कहा - "शास्त्रानुसार पति-पत्नी को एक ही धर्म में दीक्षित होना चाहिए जिससे साधना में अधिक सफलता मिलती है।"

सनातन धर्म की अचल समर्थिका रानी चिन्तित हो गयी, सोचने लगी- "किम् करोमि, क्व गच्छामि ? सहायो नैव विद्यते।"

दैव योग से उस समय उनके उद्यान में महर्षि कुमारिल भट्ट विश्राम

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कर रहे थे । रानी की आर्त्त ध्वनि महर्षि के कानों में गयी । कुमारि
कहा- "मा रोदी बरारोहे भट्टाचार्योऽस्ति अस्मिन भूतले" । अर्थात् हे सा
चिन्ता मत करो, इस धरती पर भट्टाचार्य अभी जीवित है - वह सनातन
की प्रतिष्ठा के लिए अवतरित हुआ है ।

उसने रानी को प्रेरित किया कि बौद्ध पण्डितों ओर सनातन ध पंडितों की सभा बुलायी जाय और शास्त्रार्थ में जो विजयी होगा राजा उसी में दीक्षित होंगे । तद्नुसार बौद्धधर्म के पण्डितों को शास्त्रार्थ हेतु आ किया गया ।

जब दोनों ओर के विद्वानों का सम्मेलन हुआ तो बौद्ध आचार्यों ने कि जो पराजित होगा, उसे खौलते हुए तेल से भरे कड़ाह में डूबो जाएगा ।

लम्बे शास्त्रार्थ के बाद बौद्ध आचार्यगण पराजित हो गये और कु भट्ट का विजय पताका चारों दिशाओं में फहराने लगा ।

अब शास्त्रार्थ के पहले जो निर्णय हुआ था, उसपर सनातन ध वेदज्ञ पण्डितों ने कहा कि बौद्ध जो अहिंसा के पुजारी हैं, वे ही व्यक्तियों को खौलते हुए तेल के कड़ाह में डालते हैं । हम वेद् के ऐसा नहीं कर सकते, विचारों की हिंसा ही हमारी जीत है ।

तत् पश्चात् सभी हमारे वेद के अनुचर हो गये ।

– श्री

स्वामी शंकराचार्य अद्वैतवाद का प्रचार करने के लिए दिगदिगंत थे । उस समय यात्रा की वर्तमान सुविधाएँ उपलब्ध नहीं थीं । फिर चार बार पूर्व से पश्चिम तथा उत्तर से दक्षिण आर्यावर्त्त की यात्रा क थे । उनके भ्रमण का उदेश्य वेद विरोधी द्वैत वादी मतों का खण्डन और अद्वैतवाद को प्रतिष्ठित करना था ।

अपने प्रचार यज्ञ की सहायता के लिए वे उच्च कोटि के विद्व की खोजकर रहे थे । इस क्रम में भारतवर्ष के अद्वितीय मी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कुमारिलभट्ट को खोजते हुए प्रयाग पहुँचे । महर्षि कुमारिल भट्ट जो अवतारी पुरुष थे प्रायश्चित स्वरूप भूसे की आग में स्वयं को जला रहे थे । केवल उनका मुख मण्डल ही प्रत्यक्ष हो रहा था । उन्होंने बौद्ध गुरुओं से बौद्ध धर्म का मर्म पढ़ा था और सनातन धर्म की रक्षा के लिए उन्हें पराजित भी किया था । गुरु को पराजित करना महापाप है, इसलिए वे ऐसा प्रायश्चित कर रहे थे ।

महर्षि कुमारिल भट्ट को ऐसी स्थिति में देखकर भगवान शंकर के हृदय में दया की लहर उठने लगी । महर्षि भट्ट ने आँखें खोलकर भगवान शंकर के दर्शन किए और उन्होंने अपने भाग्य की बहुत सराहना की–आप जैसे सर्वज्ञ, सर्वेश, तपोनिधि के दर्शन उपयुक्त समय पर मिले हैं । आपके यश और नाम मेरे कानों में गूँजते थे पर दर्शन का सौभाग्य नहीं मिला था । दीक्षा ग्रहण करने के पश्चात् आनन्द मन भगवान शंकर ने अपना भाष्य भट्ट जी के सामने रख दिया । समस्त ग्रन्थ दोष रहित भाष्य भी शिष्ट विद्वानों द्वारा समालोचित होने पर संसार में प्रसिद्ध हो जाता है ।

भाष्य को देखकर भट्ट जी अति प्रसन्न हुए और बोले हे विद्वन् ! इस ग्रन्थ के प्रथम अध्याय पर ही आठ हजार वार्तिक शोभित हो रहे हैं । यदि संकल्प न लिए रहता तो इस सुन्दर ग्रन्थ पर अवश्य वार्तिक लिखता । भट्ट जी ने कहा - भाग्य से ही आपके दर्शन हुए हैं । सब काल के अधीन व्यक्ति के अधीन नहीं । मैंने अनेक ग्रन्थों की रचना की, कर्म मार्ग के पथ पर अटल रहा, नैयायिकों के युक्ति जाल को काट गिराया पर इस काल को दूर नहीं कर सका । जब सारा संसार बौद्धों के द्वारा आक्रान्त हो गया और वैदिक मार्ग से लोग विरक्त हो गये थे, इसकी परीक्षाकर मैंने वेदमार्ग की रक्षा के लिए बौद्धों का मुँह बन्द करने का प्रयत्न किया ।

उनकी बातों को सुनकर, उनके अगाढ़ ज्ञान को देखकर शंकराचार्य प्रसन्न हुए । शंकराचार्य ने कहा कि आप तो 'कार्तिकेय' के अवतार है मैं आपको पूर्ववत बना देता हूँ, आप भाष्य पर वातिक लिखें और हमारे महायज्ञ में सहायक बनें । मुमारिल भट्ट ने अति विनम्र भाव से कहा - जो मैं कर

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

रहा हूँ, करने दीजिए; मैं पथ से विचलित नहीं हो सकता । हे भगवन, मेरी एक बात मानिए, अगर आप वेदान्त मार्ग को सर्वत्र फैलाना चाहते विद्वानों में अग्रगण्य यशस्वी 'मंडन मिश्र शर्मा' पर अधिकार कीजिए। आपने उनको जीत लिया तो अभीष्ट पा लिया । "विश्वरूप" के ना विख्यात वे कर्म मार्ग का उपदेश देते हुए इस पृथ्वी पर प्रसिद्ध हैं । मार्ग का उन्होंने कभी भी समादर नहीं किया । उनकी पत्नी भी दुर्वासा के श्राप से मानव रूप में जन्म लेकर पतिव्रत धर्म में लीन हैं । वे मनोरथ को पूर्ण करेंगे । आप अविलम्ब वहाँ जायँ ।

मंडन मिश्र बिहार राज्य के अन्तर्गत मिथिला क्षेत्र के "महिष्म नामक तपोभूमि में रहते हैं । (महिष्मति को अब 'महिषी' नाम से पु हैं । वह 'बनगाँव महिषी' के नाम से भी प्रसिद्ध है) ।

कहते हैं, जब सती ने शरीर त्याग किया था तो उनके नेत्र इसी पर गिरे थे । महर्षि वशिष्ठ ने यहीं तपस्या कर "उग्रतारा" की सिद्धि की थी । यहाँ उग्रतारा का भव्य मंदिर कामाख्या के ही समान है अवतारी मंडन मिश्र की जन्मभूमि है । मंडन मिश्र का एक नाम 'विश्व भी था । सोमनदी के किनारे रहने वाले श्री विष्णु मिश्र इनकी पत्नी के थे । इनकी पत्नी 'शारदा' नाम से विख्यात थीं ।

माधव लिखित 'शंकर दिग्विजय' के अनुसार मंडन मिश्र के पि नाम 'हिम मिश्र' प्रसिद्ध है । भगवान शंकर खोजते हुए मंडन मिश्र गाँव पहुँचे । वहाँ की बड़ी-बड़ी अट्टालिकाएँ रत्न जड़ित होने के आँखों को बरबस चकाचौंध कर रही थीं । उस गाँव का एक आकर्षक कमल एवं विविध पुष्पों से सुशोभित; पक्षियों के कलरव से गुंजित था। काल महिलाएँ स्नान करने वहाँ पहुँचती थीं मण्डन मिश्र की दासी आती थी । आचार्य शंकर ने देखा कि शिष्ट महिलाओं का समूह है, यह पता मिल सकेगा ।

आचार्य शंकर ने पूछा - मंडन मिश्रस्य क्वधाम ?

(उस समय मातृभाषा संस्कृत ही थी) ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2
मंडन मिश्र की दासी ने उत्तर दिया :-

"स्वतः प्रमाणं परतः प्रमाणम्
कीराङ्गना यत्र गिरं गिरन्ति ।
द्वारस्थ नीडान्तर सन्निरुद्धा
जानीहि तन्मण्डन पण्डितौकः ॥
फलप्रदं कर्म फल प्रदोऽजः
कीराङ्गना यत्र गिरं गिरन्ति ।
द्वारस्थनीडान्तर सन्निरूद्धा
जानीहि तन्मण्डन पण्डितौकः ॥
जगद्ध्रुवं स्थाज्जगध्रुवं स्यात्
कीराङ्गना यत्र गिरं गिरन्ति ।
द्वारस्थनीडान्तर सन्निरुद्धा
जानीहि तन्मण्डन पण्डितौकः ॥"

र्थात् - जिसके द्वार पर पिजरे में बैठे हुए पक्षी (मैना-सुग्गा) चर्चा करते कि वेद स्वतः प्रमाण है अथवा परतः प्रमाण है, कर्म का अनुकूल-प्रतिकूल न कर्म देता है अथवा ईश्वर; जगत ध्रुव है अथवा अध्रुव है - उसे ही मंडन मिश्र का घर समझिएगा ।

दासी के मुख से शुद्ध संस्कृत श्लोकों को सुनकर शंकराचार्य विस्मित गये । सोचा निश्चित ही यह विद्वानों की क्षेत्र है, मेरे भ्रमण काल में ऐसा यत्र स्थान नहीं मिला ।

वेदों की प्रमाणिकता पर भारतीय दार्शनिकों ने खूब विवेचन किया है । मांसकों के मत में वेद स्वयं प्रमाण रूप हैं । उनकी प्रमाणिकता सिद्ध करने लिए किसी अन्य प्रमाण की अपेक्षा नहीं है । जैसे पुराण-स्मृति आदि को नी प्रमाणिकता के लिए वेदों की अपेक्षा रहती है क्योंकि ये किसी व्यक्ति प्रणीत हैं । परन्तु वेद किसी व्यक्ति से प्रणीत न होने के कारण अपौरुषेय

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

हैं, अतः स्वतः प्रमाण रूप हैं । परन्तु नैयायिक मत उक्त मत से भिन्न है पर वे वेद को ईश्वर प्रणीत मानते हैं, अतः पौरुषेय होने से परतः प्रमाण हैं

कर्म के फल के विषय में भी मीमांसा तथा वेदान्त आदि में पर्याप्त मतभेद हैं । मीमांसक फलदातृ शक्ति कर्म में मानते हैं जबकि वेदान्त में कर्म जड़ होने से फलदाता नहीं हो सकता किन्तु सर्वत्र ईश्वर ही कर्मफल दाता है । (ब्रह्मसूत्र द्रष्टव्य है) । जगत् के विषय में भी मीमांसा तथा वेदान्त में गहरा मतभेद है । मीमांसक जगत् को ध्रुव (नित्य) मानते हैं जबकि वेदान्ती लोग अध्रुव मानते हैं ।

भगवान शंकर जब मंडन मिश्र के द्वार पर पहुँचे तो देखा – मीमांसक मंडन मिर का घर अनेक ललित कलाओं से मंडित, सम्पदा से भरपूर विशाल और सुन्दर है । महर्षि मंडन मिश्र बंद मंदिर में अपने पिता का वार्षिक श्राद्ध कर रहे थे । योग शिरोमणि शंकर योग बल से अति सूक्ष्म रूप धारण कर खिड़की के द्वार से अंदर प्रवेश कर गये और देखा महर्षि व्यास तथा दार्शनिक जैमिनी वहाँ उपस्थित थे एवं मिश्र जी दोनों के चरण कमल की पूजा में लगे थे । आचार्य शंकर ने कमल के समान सुन्दर तथा विद्याओं से विभूषित मंडन मिश्र को देखा । दोनों ऋषियों ने आचार्य शंकर का अभिनन्दन किया । मंडन मिश्र कर्मकाण्ड के विशेषज्ञ थे । वे दोनों ऋषियों के साथ आकाश मार्ग से आए सन्यासी को देखकर अप्रसन्न हो गये । क्योंकि इस अवसर पर सन्यासी का आगमन निषिद्ध है । क्रोध भरी दृष्टि से उन्होंने शंकर से कहा – कुतो मुण्डी ? (हे मुण्डी, कहाँ से आए – मुण्डी शब्द सन्यासी के प्रति अनादर सूचक है इस वाक्य का दूसरा अर्थ यह भी हो सकता है कहाँ से मुण्डित हो ?)

आचार्य ने दूसरे अर्थ को मन में रखकर उत्तर दिया – आगलात् (अर्थात् गले तक मुण्डन है) ।

मण्डन – मुण्डन के विषय में नहीं पूछता, किन्तु 'पन्थास्ते पृच्छते मया' अर्थात् मैं आपसे मार्ग के विषय में पूछता हूँ कि आप आए कहाँ से ।

तब शंकर ने सस्मित कहा – किमाह पन्था ? अर्थात् मार्ग से पूछा

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2
र उसने क्या उत्तर दिया ?

मण्डन (चिढ़कर) – त्वन्माता मुण्डा । अर्थात् मार्ग ने उत्तर दिया कि ुम्हारी माता मुण्डा है ।

ंकर – 'इत्याहं तथैव हि' – अर्थात् तुमने ही मार्ग से पूछा है इसलिए वह त्तर भी तुम्हारे लिए ही होगा अर्थात् तुम्हारी माता मुण्डा – सन्यासिनी है, मारी माता नहीं ।

ण्डन – 'अहो पीता किम सुरा ? नैव श्वेता यतः समरा किं त्वं जानासि ? ्णमहं वर्ण भवान रसम् ।

ंडन – क्या तुमने सुरा (मदिरा) पी है, अर्थात् शराबी ही इस प्रकार की तें करते हैं । पीता शब्द का दूसरा अर्थ पीला रंग भी होता है, उसे ही मन रखकर शंकर ने कहा – सुरा तो श्वेत होती है, पीली नहीं ।

डन – तुम तो उसके रंग को भी जानते हो ।

र – मैं तो केवल रंग ही जानता हूँ, लेकिन आप तो उसके रस को भी ते हैं । अतः 'सुरा न पिवेत्' इस निषिद्ध वाक्य से आप पाप के भागी मैं नहीं, मैं तो केवल रंग को जानता हूँ ।

मंडन मिश्र के कटुता पूर्ण शब्द कहने पर भी शंकर स्थिर रहे । व्यास जैमिनी के समझाने पर मंडन जी ने कहा कि मैं शास्त्रार्थ से नहीं डरता मुझे तो कोई ऐसा विद्वान नहीं मिला । मैं तो शेषनाग से भी नहीं डरता । इस तरह मंडन मिश्र शास्त्रार्थ के लिए तैयार हो गए ।

शंकर भी तैयार हो गए । परन्तु, उन्होंने कहा कि पक्ष-विपक्ष की चर्चा लिए एक निर्णायक चाहिए, इसलिए शंकर ने व्यास ओर जैमिनी से स्थ बनने की प्रार्थना की । दोनों मुनियों ने कहा कि आपलोग मंडन मिश्र पत्नी जो सरस्वती का अवतार हैं श्रीमती ''उभय भारती'' की मध्यस्थता कार करें । वह अपने पद की गरिमा को बनाए रखने में सक्षम हैं ।

पंडित मंडन मिश्र के विशाल भव्य भवन में शास्त्रार्थ का आयोजन । विश्व विश्रुत शंकर और मंडन का शास्त्रार्थ देखने दूर-दूर से लोग त्रि होने लगे ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

शंकर और मंडन के आग्रह पर भारती ने मध्यस्थ पद को अलं
किया । शास्त्रार्थ की शोभा वर्णनातीत थी । दोनों विद्वान सप्रसन्न वाद-वि
कर रहे थे । बीच में सरस्वती अपने मध्यस्थ पद की गरिमा निभा रही
"यह नारी जाति के लिए गौरव की बात है ।"

भगवान शंकर की प्रतिज्ञा थी -

"ब्रह्मैकं परमार्थ सच्चिदमलं विश्व प्रप श्चात्मना
शुक्ति रूप्य परात्मनेव बहलाज्ञानवृतं भासते ।
तज्ज्ञानान्निखिल प्रपश्चनिलया स्वात्म व्यवस्थापरं
निर्वाणं जनि मुक्तमभ्युपगतं मानश्रुते र्मरतकम् ॥"

शंकर - ब्रह्म एक सत् चित निर्मल तथा परमार्थ है । जैसे मिथ्याज्ञान से
रजत रूप में भासती है, वैसे ही सत् चित आनन्द स्वरूप मिथ्या अ
अज्ञान दृश्यमान प्रपञ्च रूप से भासित होता है । जब इसे 'त्वमसि',
ब्रह्मास्मि' आदि उपनिषद वाक्यों द्वारा जीव ब्रह्मैक्य ज्ञान उत्पन्न होता है
अनादि कारण मिथ्या ज्ञान सहित यह समस्त प्रपञ्च निवृत हो जाता है और
अपने चिन्मय स्वरूप में प्रतिष्ठित उस समय जन्म-मरण से मुक्त हो
है ।

अपने कथन को दुहराता है - जीव ब्रह्मैक्य है - 'एकमेवा
ब्रह्म' - एक ही ब्रह्म है ।

'सत्यं ज्ञानमन्तं ब्रह्म' - ब्रह्म सत्य, ज्ञान, अनन्त स्वरूप है । "विज्ञान
ब्रह्म", "सर्वे खल्विदं ब्रह्म" - सब निश्चित ब्रह्म ही है ।

जीव ब्रह्म के एकत्व का अनुभव करने वाले तत्त्वविद् को मोह
शोक कहाँ ?

पुनः शंकराचार्य जी ने कहा - यदि मैं इस शास्त्रार्थ में परा
जाऊँगा तो इस गेरुआ वस्त्र सहित सन्यास को तिलांजलि देकर श्वेत
धारी हो जाऊँगा । इस विवाद का निर्णायक उभय भारती हो । तदन्तर
मिश्र ने भी अपने मत की प्रतिष्ठापक घोषणा की ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2
मण्डन की प्रतिज्ञा -

"वेदान्ता न प्रमाणं चितिवपुषि पदे तत्र सऽत्ययोगात्,
पूर्वो भागः प्रमाणं पद चय गामिते कार्य वस्तुन्य शेषे ।
शब्दानां कार्यमात्रं प्रति समधिगता शक्तिरभ्युन्नतानां.
कर्मभ्यो मुक्तिरिष्टा तदिह त मृताभाऽऽयुषः स्यात्समाप्तेः ।"

मण्डन - चैतन्य स्वरूप ब्रह्म के प्रतिपादन करने में वेदान्त उपनिषद प्रमाण नहीं है क्योंकि कार्यान्वित चिद्रूप सिद्ध वस्तु में शक्ति का योग नहीं है । अर्थात् सिद्ध वस्तु के प्रतिपादन में वेदान्त वाक्यों का तांत्पर्य नहीं है । जैसे घट, पट आदि सिद्ध वस्तु के बोध कराने में शास्त्र की आवश्यकता नहीं है । परन्तु, वेदान्त के पूर्व भाग कर्मकाण्ड पर समुदयात्मक वाक्यों के द्वारा समष्टिगत वाक्यों के द्वारा सम्पूर्ण कार्य वस्तु को बोध कराने में प्रमाण है । जैसे- घटमानय, "घड़ा लाओ" - इत्यादि वाक्यों की शक्ति कार्य मात्र में ही अभिमत है । कर्मों से ही मुक्ति मिलती है । अतः संसार में मनुष्यों को जीवन भर सत्कर्म करना चाहिए ।

"कुवन्नेवेह कर्माणि जिजिविषेछत् समाः" - कर्म करते हुए सौ वर्ष जीने की इच्छा करें । इसप्रकार सिद्ध होता है कि वेद मंत्रों का कर्म में तात्पर्य है, ब्रह्म में नहीं । पुनः मंडन मिश्र ने कहा- यदि मैं पराजित हो जाऊँगा तो गार्हस्थ्य छोड़कर कसाय वस्त्रों को धारण कर सन्यासी हो जाऊँगा । आपके द्वारा शास्त्रार्थ के लिए निर्णायक उभयभारती को स्वीकृति देता हूँ ।

निश्चित समय पर दोनों का घनघोर शास्त्रार्थ छिड़ गया । सुनने के लिए मानव ही नहीं, देवता लोग भी आ गये । उभयभारती ने पूर्व निश्चयानुसार उन लोगों के कण्ठ में पुष्पमाला पहनाकर घोषणा किया कि जिसके कण्ठ की माला मलीन हो जाएगी, वह निश्चित ही पराजित समझा जाएगा । ऐसा कह उभय भारती दोनों के स्वागतार्थ पति के लिए भोजन एवं सन्यासी के लिए भिक्षा तैयार करने चली गयी ।

शास्त्रार्थ की प्रसिद्धि चहुँ ओर फैल गयी । शास्त्रार्थ सुनने ब्रह्मा आदि देवता भी मंदिर के उपर विराजमान हुए । शास्त्रार्थ में दोनों ओर की वाणी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

में मधुरता थी । उत्तर प्रत्युत्तर की शृंखला चलती रही । शास्त्रार्थ में मध्य में भारती पति से कहती - भोजन का समय हो गया और शंकर से कहती भिक्षा पान का समय हो गया । इसप्रकार शास्त्रार्थ सात दिनों तक चलता रहा । दोनों स्वस्थ एवं प्रसन्न मन थे । अंततोगत्वा भगवान शंकर ने मण्डन मिश्र के सभी तर्कों को खण्डित कर दिया । मंडन मिश्र निरुत्तर हो गये । आचार्य शंकर ने वेद प्रमाण से यह सिद्ध कर दिया कि वेदान्त ब्रह्म में प्रमाण है, कर्म में नहीं ।

मण्डन - यदि जीवन की ब्रह्म के साथ एकता हो तो सबको प्रतीत होनी चाहिए कि जीव ब्रह्म है, परन्तु एकत्व का ज्ञान नहीं होता है, अतः दोनों में अभेद नहीं भेद है ।

शंकर - अंधेरा में घड़ा है परन्तु ज्ञात नहीं होता । इसका यह अर्थ नहीं कि घड़ा नहीं है । इसप्रकार अविद्या के कारण अभेद का ज्ञान नहीं होता है । इसलिए नहीं कहना चाहिए कि अभेद नहीं है । क्योंकि विद्या से अविद्या हट जाने पर अभेद स्पष्ट रूप से प्रतीत होता है ।

अन्त में 'तत्वमसि' महावाक्य पर शास्त्रार्थ समाप्त हुआ । मण्डन मिश्र के गले की माला मलीन देखकर भारती ने कहा - आप दोनों भिक्षा रूपी भोजन के लिए चलिए ।

जब शंकर के कंठ की माला रजत के समान ही चमकती रही और मंडन की माला धूमिल हो गई तो पूर्व निश्चयानुसार शंकर विजयी हुए । आजीवन मंडन मिश्र मीमांसा के अध्ययन में लगे रहने के कारण उन्हें इसके प्रति आकर्षण सर्वथा लुप्त नहीं हुआ ।

मंडन मिश्र - हे यतिराज ! मुझे इस समय अभिनव पराजय से लेश मात्र भी दुःख नहीं है, किन्तु इस बात का पश्चाताप है कि त्रिकालज्ञ जैमिनी मुनि के बचनों का अपने खण्डन किया है । वे तपोनिधि सदा वेदों के प्रसार और जगत कल्याण में लीन थे, तो आप ही सोचिए कि उन्होंने अनुचित सूत्रों की रचना क्यों की ?

शंकर - जैमिनी के सिद्धान्त में कहीं संशय या विपर्यय नहीं है । यह केवल हमारी अनभिज्ञता है जिससे उनके विचार को हम नहीं समझ सकते ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2
जैमिनी का सिद्धान्त परमानन्द स्वरूप परब्रह्म के प्रतिपादन में ही है । परन्तु विषय प्रवाह में बहने वाले जन साधारण को उसकी ओर ले जाने के लिए पुण्य कर्मों की व्यवस्था की गई है । निष्काम कर्म से अन्तःकरण की शुद्धि होती है जो ब्रह्मज्ञान की प्राप्ति में प्रबल सहायक है । ऐसे शुद्ध अन्तःकरण वाले व्यक्ति ब्रह्मज्ञानी हो ही जाते हैं ।

मंडन - समस्त वेद का सच्चिदानन्द ब्रह्म के प्रतिपादन में तात्पर्य है कि परमेश्वर से भिन्न कर्म ही फलदाता है । इस सिद्धान्त का प्रतिपादन मुनि ने ईश्वर का निराकरण कर कैसे किया ?

शंकर - प्रत्येक कर्म को करने वाला कोई कर्त्ता होता है । जैसे विशाल भवन को किसी कारीगर ने बनाया है अतः जगत का कर्म भी किसी विशेष कर्त्ता द्वारा होना चाहिए । वह सर्वज्ञ ईश्वर ही कर्त्ता है । यह अनुमान आगम वचनों के बिना ईश्वर को सिद्ध करता हे । जैमिनी मुनि श्रुति सिद्ध ईश्वर का खण्डन नहीं करते, किन्तु तर्क सम्मत श्रुति हीन अनुमान का ही खण्डन करते हैं । इसी तरह मेरी समझ में उपनिषद रहस्य से जैमिनी का सिद्धान्त लेशमात्र भी विरुद्ध नहीं है । जैमिनी के इस गूढ़ अभिप्राय को न समझकर ही लोग उन्हें अनिश्वरवादी बतलाते हैं ।

मण्डन - मानसिक शंका को निवृत करने के लिए मुनि के वचन से ही उनके अभिप्राय को जानने के लिए मण्डन ने पुनः जैमिनी का स्मरण किया । मुनि शीघ्र मण्डन के समीप प्रकट हुए ।

जैमिनी - सुनो, ऐसा बोले - हे सुमते ! भाष्यकार शंकर के वचनों में सन्देह मत कर । मेरे सूत्रों का जो अभिप्राय उन्होंने कहा है, वह इससे भिन्न नहीं है । ये यतिराज केवल मेरे ही अभिप्राय को नहीं जानते बल्कि श्रुति और समस्त शास्त्रों का अभिप्राय भी जानते हैं । भूत, भविष्यत् तथा वर्त्तमान को जितना ये जानते हैं उतना अन्य कोई भी नहीं जानता । मैंने उन्हीं से ज्ञान प्राप्त किया है । भला एक भी सूत्र उनके इस सिद्धान्त के विपरीत मैं कैसे कह सकता हूँ ।

संसार में निमग्न व्यक्तियों के उद्धारार्थ शरीर धारण करने वाले इन्हें

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2
तुम शिव समझ ।

त्रेतायुग में दत्तात्रेय ने, द्वापर में सुमति व्यास ने और इस कलि में आचार्य शंकर के मत में प्रविष्ट होकर संसार समुद्र को पार कर ।

मंडल मिश्र को सभा में इस प्रकार ज्ञान देकर जैमिनी मुनि शंकर को मन ही मन अभिवादन कर अन्तर्ध्यान हो गए । इसप्रकार मण्डन मिश्र अब निःशङ्क अद्वैतवादी बन गये ।

परमब्रह्म योगीश्वर स्वरूपस्थ आचार्य रामानन्द शास्त्री 'आनन्द' जी का मत है कि मण्डन मिश्र बहुत बड़े तांत्रिक थे, उन्हें कोई पराजित नहीं कर सकता था । उन्होंने समझा - यह शंकर बालक है, मुझसे क्या शास्त्रार्थ करेगा ? यदि मण्डन मिश्र दिव्य दृष्टि से जानने की चेष्टा करते कि शंकर सामान्य नहीं अवतारी पुरूष है तो वे तांत्रिक क्रिया द्वारा शंकर का वाक् अवरुद्ध कर सकते थे ।

विदुषी भारती ने विनीत शब्दों में शंकराचार्य से कहा - आपने मेरे पति को पराजित किया है, मैं उनकी अर्द्धाङ्गिनी हूँ, अतः जबतक आप मुझे शास्त्रार्थ में पराजित नहीं कर दें, आपका पूर्ण विजय नहीं है । शंकर एक नारी से शास्त्रार्थ करना अनुचित मानते थे । अन्ततोगत्वा शंकर को भारती की बात माननी पड़ी । शास्त्रार्थ का आनन्द लेने देवलोग से देवी-देवता भी उपस्थित रहते । यह शास्त्रार्थ सत्रह दिनों तक चलता रहा ।

भारती ने प्रश्न किया - काम की कलाएँ कितनी हैं ? उनका स्वरूप कैसा है ? किन स्थानों पर वे निवास करती हैं ? शुक्ल पक्ष या कृष्ण पक्ष में उनकी स्थिति कहाँ-कहाँ रहती है ? युवती में तथा पुरुष में इन कलाओं का निवास किस प्रकार है ? शंकर ने बहुत विचार कर इन प्रश्नों का उत्तर नहीं दिया । उत्तर देने के लिए भारती से तीन महीने का समय माँगा । भारती ने कहा - तथास्तु ।

शंकराचार्य भगवान शंकर के अवतार थे । "पर काया प्रवेश" विद्या उनके लिए खिलौना था । घूमते-घूमते एक राज्य में पहुँचे जहाँ उन्होंने सुना-राजा स्वस्थ शरीर को छोड़कर मर गया है । भगवान शंकर ने अपने

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

शिष्यों को समझाया–मेरे शव को सुरक्षित रखना । जब विशेष कोलाहल सुनाई पड़े तो अमुक क्रिया कर देना, मैं पुनः इस शरीर में आ जाऊँगा ।

वह मृतक् राजा जीवित हो उठा । उसके परिजन आनन्द की वर्षा में स्नान करने लगे । वे राजा की भाँति सभी कार्यों का निरीक्षण करते । रानी को यह भान होता था कि पूर्व पति और अभी विद्यमान पति में अंतर है ।

एकदिन एक भिक्षुक भिक्षा मांगने आया । रानी ने कहा – हे यतिवर, हमारे पति मर गये थे, पुनः जीवित होकर आए हैं । इसका क्या रहस्य है ? उस योगी ने कहा – यह योग विद्या का खेल है । तुम अपने राज्य में अन्वेषण कराओ कि कोई शव तो नहीं सुरक्षित रखा जा रहा है । राज्य में कोलाहल मच गया । इस घटना को जानकर शंकर के शिष्यों ने गुरु के आदेशित क्रिया को किया । शंकराचार्य पूर्ववत खड़े हो गये । पुनः आकर शंकराचार्य ने भारती से शास्त्रार्थ किया । अंत में भारती ने भी शंकराचार्य का लोहा मान लिया । भारती ने कहा – आप सर्वज्ञ हैं, आपने हम दोनों पति–पत्नी को पराजित किया हे, इसके लिए हमें कोई लज्जा नहीं है । क्या सूर्य के द्वारा किया गया पराभव चन्द्रमा की अपकीर्ति फैलाता है ?

इतना कहकर भारती ने कहा – मुझे अब जाने की आज्ञा दीजिए । शंकराचार्य योगशक्ति से जान गये कि भारती अंतर्ध्यान होने वाली शारदा शक्ति है । स्वामी ने कहा – हे देवि ऋष्यश्रृंग क्षेत्र में हमारे द्वारा नवनिर्मित मंदिर में आप 'शारदा' नाम से पूजा प्राप्त करें और भक्तों की अभिलाषित कामनाओं को पूर्ण करती हुई सज्जनों के पास सदा निवास करें ।

'तथास्तु' कहकर शारदा ब्रह्म के प्रिय लोक चली गईं । वहाँ भारती के अन्तर्ध्यान होने से सभा में उपस्थित लोग अति विस्मित हुए । मण्डन मिश्र ने सभी पदार्थों का त्यागकर आचार्य से सन्यास की दीक्षा ले ली । आचार्य ने उन्हें 'तत्त्वमसि' का तात्विक अर्थ हृदयस्थ करा दिया । मण्डन मिश्र तदन्तर सुरेश्वराचार्य के नाम से प्रसिद्ध हुए । वे पीठाधीश ऋंगेरी मठ बनाए गये । उन्होंने अनेक ग्रन्थों की रचना की जो भारतीय साहित्य की अमूल्य धरोहर हैं ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

गुरुकृपा से ही यह लेख लिखा गया है । उनकी कृपा है । उनकी ही वस्तु उन्हें समर्पित करता हूँ । 'गुरुश्शरणम्, प्रभुश्शरणम्' ।

– आचार्य श्याम नारायण झा शास्त्री ।

अनुलेखिका – मृणालनी रमण ।

विशेष वार्ता

सिद्धि दिवस, दिनांक 31-08-2009

स्थान – राधा कृष्ण, सीताराम मन्दिर, रमणा, मुजफ्फरपुर ।

श्री गुरुदेव जी के सिद्धि दिवस के उपलक्ष्य में दि. 31-08-2009, चन्द्रवार को मुजफ्फरपुर के परम पावन रमणा मन्दिर में शिष्य वृन्द श्री गुरुदेव जी के पूजन हेतु एकत्र हुए ।

पूजन, कीर्त्तन एवं हवन के कार्यक्रम दिन 11 बजे से लेकर संध्या 5 बजे तक चलते रहे । श्रद्धा एवं उल्लास के साथ उपस्थित भक्तों ने कार्यक्रम में भाग लिया । मन्दिर के पुजारियों का भी सहयोग सराहनीय था ।

हवन-पूजन के विसर्जन के पूर्व आनन्द नगर आश्रम के संस्थापक सदस्य भक्तवर श्री अमरेश्वरधारी सिंह जी सपत्नीक उपस्थित हुए । उनकी सुपुत्री प्रोफेसर शीला सिंह, विभागाध्यक्ष, जीव विज्ञान, महिला महाविद्यालय, एम.डी.डी.एम तथा उनके पति डा0 गिरीन्द्र मोहन सिंह, प्राध्यापक श्रीकृष्ण मेडिकल कॉलेज, मुजफ्फरपुर भी सश्रद्ध पूजा-अर्चा में शामिल हुए । इस कार्यक्रम के प्रधान डा0 अमर कृष्ण थे । उपस्थित भक्तों की संख्या 50 से अधिक थी । इस अवसर पर भक्तों द्वारा अर्पित संग्रह राशि एक हजार तीन सौ अठारह रूपये (1318 रू०) मुख्यालय, सिवान आश्रम में आश्रम माता जी को समर्पित किया गया ।

संयोजक :
वीरेन्द्र कुमार मिश्र
मेनन गली, मिठनपूरा
रमणा, मुजफ्फरपुर ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

श्री सीता मैया

- श्री धनञ्जय प्रसाद

हजार वर्ष इधर के जो भक्तिग्रंथ लिखे गये हैं उनमें कृष्ण भक्ति राम भक्ति ही प्रधान है । मुसलमानों के भारत प्रवेश के बाद सर्वत्र कृष्णभक्ति दिखती है । हिंदी की हवा जब से बहनी शुरू हुयी है जो अभी बह रही है उसमें राम का भक्ति ग्रंथ अधिक लिखे गये हैं । राम को शिव से आराधित माना जा रहा है । जबकि राम के माता-पिता को संतानोत्पति के लिये दवा खानी पड़ी और पुत्र प्राप्ति का यज्ञ कराना पड़ा । राम का परिचय सीमित है जैसे 2 पैर, 2 हाथ, 1 मस्तक, पिताम्बर, मुकुट, बाँण और धनुष । शिव का परिचय सीमित नहीं है कहीं पंचमुख, दशभुज, कहीं पंचमुख चतुर्भुज कहीं तृमुख, षडभुज, कहीं एकमुख द्विभुज । कहीं लिंगात्मक स्वरूप, उसमें भी कहीं काला-तामस शिवलिंग, कहीं लालराजस शिवलिंग, कही सात्विक उजला शिवलिंग । कहीं बिना मस्तक का स्वरूप-कबंधशिव जो शिरोरूहा महाविद्या के स्वामी हैं । जब जैसा अनुभव किया गया या जिस ऋषि को जैसा स्वरूप प्राप्त हुआ उसने शिव को वैसा ही बताया । महर्षि वामदेव ने "नमः शिवाय" मंत्र का अनुसंधान किया और बताया भगवान शिव वाममार्ग के प्रवर्तक हैं अतः वामदेव हैं । तो दूसरे ने साबित किया कि वे दक्षिणमार्ग के प्रवर्तक हैं अतः दक्षिणा मूर्त्ति हैं । तो तीसरे ने कहा भक्ति धारा वहीं से चली हैं क्योंकि वे पशुपति हैं । मुझें बात दूसरी कहनी है, ब्रह्म की परिभाषा नहीं बतानी है। अभी-अभी किसी को यह बता रहा था कि लेखकों और कवियों तथा व्यासों द्वारा स्थापित विचार को अपनी बुद्धि से साफ कर ही ग्राह्य बनाना चाहिये । जो कहते हैं कि राम सबसे श्रेष्ठ हैं वे विवाद में फँस जायेंगे, शायद अँधेरे में रहेंगे लेकिन जो राम को सबसे प्रिय मानकर उपासना करते हैं वे सदैव विवाद से दूर रहेंगे और आनन्द भी उत्तरोत्तर अधिक पायेंगे ।

मैंने राम पर प्रारम्भ ही क्यों किया, वस्तुतः मैं कहना चाहता था सीता मैया पर । तंत्र ग्रन्थों में उन्हें दूसरी महाविद्या तारा का अवतार बताया गया है । भगवान राम को वशिष्ट ऋषि ने तारा महाविद्या की साधना ही करायी थी । भगवान राम को जब साधना में लगने का मन हुआ तब वे वशिष्ठ ऋषि

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

से जाकर बोले कि ऐसी विद्या दीजिये जिससे मैं संसार को तार दूँ। इसपर संसार सागर से तारने वाली विद्या - तारामहाविद्या की उपासना वशिष्ठ जी ने बताया। गुरुदेव ने कहा था - इस विद्या को प्राप्त करने के बाद भगवान राम ने कहा था - "गुरुदेव यह विद्या मेरे पिता जी को क्यों नहीं बतायी गयी ?

वशिष्ठ जी ने कहा था राम तुम्हारें पिता मेरे पास आये थे पुत्र प्राप्ति के लिये। तुम जानते हो तुम्हारे लिये ही मैंने इस परिवार का कुलगुरु बनने का बोझ उठाया है। विश्वामित्र के यज्ञ संरक्षण में जाना बहाना लगता है, क्योंकि यज्ञ तो वशिष्ठ ऋषि भी करते थे। अवध नरेश के मित्र सभी ऋषि महर्षि यज्ञ करते थे यज्ञरक्षा की समस्या विश्वामित्र जी को क्यों हुयी ? वस्तुतः निःशेष साधन सम्पन्न कराने के लिये ही विश्वामित्र ऋषि वशिष्ठ जी के अनुरोध पर राम-लक्ष्मण को ले गये थे। और उसी क्रम में वे जनकपुर राम-लक्ष्मण को ले गये।

क्या कुछ खास बात थी जो गुरु के संरक्षण में इन राजकुमारों को उस समारोह में जाना पड़ा जिसमें सभी अपने सगे संबंधी सेवक अनुचरों के साथ गये थे। कुछ इसमें गुरुकर्म अवश्य हैं। सबने धनुष को आजमाया है। विश्वामित्र ने राम को धनुष तोड़ने की आज्ञा दिया है। सीता को प्राप्त करने के लिए राम ने कुछ नहीं किया है, वे विश्वामित्र ऋषि के यहाँ गये हैं यज्ञ की रक्षा करने बाह्यत। आन्तर तो जानते हैं वशिष्ठ ऋषि और विश्वामित्र ऋषि ही और जनकपुर जाना भी इन्हीं दोनों गुरुओं की सोची समझी व्यवस्था है। सीता राम को प्राप्त हो गयीं, सीता जो तारा महाविद्या का अवतार मानी जाती हैं। वशिष्ट ऋषि तारा की साधना के सबसे बड़े विशेषज्ञ लगते हैं - बंगाल में रामपुर हाट के पास तारा देवी का भारत प्रसिद्ध मंदिर है जहाँ वामाक्षेपा पुजारी थे, वह तारा वशिष्ट ऋषि द्वारा स्थापित हैं। मिथिला में महीषि में प्रसिद्ध तारामंदिर है जो वशिष्ठ ऋषि द्वारा स्थापित है। बिहार के चम्पारण में वाल्मीकि नगर, जहाँ वाल्मीकि ऋषि का आश्रम है अब जो नेपाल की सीमा में पड़ता है, वहाँ भी वशिष्ठ ऋषि के द्वारा स्थापित तारा ही हैं जिन्हें स्थानीय नरदेवी कहते हैं। वाल्मीकि नगर वाली नरदेवी को गुरुदेव ने तारा बताया था। वे वहाँ अनेक अनुष्ठान किये थे। तारापीठ में तो नदी के किनारे मकई के डण्ठल की पलानी बनाकर रहे थे वे घोर श्मशान में -

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2
छः महीने अपने श्री बाबा जी के निर्देशन में देवघर के बम-बम ब्रह्मचारी की देख रेख में । वशिष्ठ ऋषि साधन जगत में एक महत्त्वपूर्ण व्यक्तित्व हैं इसीलिये गुरुदेव अपने अंतरङ्ग शिष्य को तारापीठ दर्शनार्थ भेजते थे । मुझे भी 2 बार भेजे हैं साथ नहीं गये हैं, एकबार देवघर अपने रुककर मुझे गाड़ी से भेजे दूसरे के साथ तो एकबार दुमका रुककर भेजे किन्तु कठोर निर्देशन में । भगवान राम को सभी मानते हैं भगवान विष्णु का अवतार तो सीता भी तारा की अवतार थीं । कदाचित वह अधिक अंश से अवतरित थीं शायद इसीलिये दोनों सुख पूर्वक एक साथ अधिक नहीं रह पाये । अब आइये असली बात पर । वशिष्ठ जी ने सीता को राम के साथ जोड़ तो दिया लेकिन सीता में जो शक्ति थी उसे राम को कैसे प्राप्त कराया जाय यह प्रक्रिया जारी थी और इसी में रावण सीता को ले गया । रावण को ऐसा सम्बोधन गुरुदेव पसन्द नहीं करते थे । वे सख्त नाराज होते थे । तुलसीदास जी ने रावण के लिये अधम सम्बोधन प्रसारित किया है उसी के कारण मैं भी रावण के लिये उत्तम सम्बोधन नहीं रख पाता हूँ क्योंकि हिंदी के राज्य में रहता हूँ । गुरुदेव सदा वाल्मीकि को कोट करते - रावणस्य महात्मनः - रावण को रावण के समय में सभी महात्मा रावण ही कहते थे बस अहंकार ही तो सबकी जड़ थी । जो बात विश्वामित्र ऋषि को तथा वशिष्ठ ऋषि को मालूम थी वह रावण को भी मालूम थी और इस गम्भीर बात को भगवान शिव ने बहुत पहले ही समझ लिया था अतः वे भी एकादशरूद्र का अवतार लेकर चले आये, सम्पूर्ण विद्याओं और गुरुओं के गुरु महावीर के रूप में पधार चुके थे । भगवान राम सीता के माध्यम से आदि शक्ति का वरदान प्राप्त करते इसके पहले रावण राक्षस संस्कृति के अनुसार अपहरण कर सीता को ले गये । अगर रावण सीता को सामान्य स्त्री समझते और उन्हें पत्नी बनाने की सोचते तो कौन उन्हें रोक सकता था ? वे सीता को वाटिका में रखते हैं और लंका की सबसे महान (विदुषी) और साधना सम्पन्न स्त्री त्रिजटा को सेवा में नियुक्त करते हैं । अगर गलत उद्देश्य था तो त्रिजटा की नियुक्ति क्यों होती ? महात्मा रावण जब-जब मिलने गये हैं तब-तब मंदोदरी को साथ लेकर गये हैं । क्या ऐसा व्यक्ति चरित्रभ्रष्ठ कहा जायेगा ? निश्चित ही माता को पूजकर उनसे वरदान प्राप्त करना था । रावण की प्राप्ति करने की शैली यही थी वलात् प्राप्त

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

करना। विवश कर वरदान लेना। और अनेक प्रयत्न के बाद भी सीताजी प्रसन्न नहीं हुयीं जो रावण को पूजन की अनुमत दें। श्रीराम से अलग हांने का कष्ट उन्हें बना रहा और ऐसे ही में श्रीमहावीर जी सीता जी के सम्मुख पहुँच गये। सीता जी महावीर जी के व्यवहार से इतना विह्वल हुयीं, इतना गद्-गद् हुयीं की तुलसी दास जी के शब्दों में - अष्टसिद्धि नव निधि के दाता। असबर दीन्ह जानकी माता ।। इतना कुछ दे दिया - अष्टसिद्धि नव निधि बाँटने का सामर्थ्य दिया। आप पूरी रामायण पढ़ जायें किसी भी जगह पर भगवान राम हनुमान जी को कुछ देने का न साहस किये हैं न प्रयत्न। जो मिला है श्री सीता जी से। दरअसल लीला में भी ध्यान रखा गया है गरिमा का। शिव के अवतार को विष्णु का अवतार कुछ नहीं दे सकता उसे शक्ति का अवतार ही कुछ दे सकता है महावीर जी ने सीता जी को मात कहकर जो सम्बोधन किया है और रामजी का समाचार दिया है इससे सीत जी इतनी गद्-गद् हो गयीं जो तुरत दे दिया। प्रत्यक्ष में तो वरदान "अष्ट सिद्धि नवनिधि के दाता" का ही लगता है लेकिन यथार्थ यह है कि न रावण आज रहे, न राम उस शरीर में रहे (वह शरीर छोड़ना पड़ा) श्री महावीर जी आज भी हैं और कहा जाता है उन्हें "भविष्यत ब्रह्मणे नमः"। महीवीर जी ने लंका में जाकर इसे किया। अगर रावण सफल हो जाते तो आज धरती पर राक्षस संस्कृति रहती और भगवान रावण सर्वत्र पूजे जाते। सम्पूर्ण सृष्टि रावण के अधीन रहती। महीवीर जी ने सीता जी तक पहुँचने का तरीका अपनाया श्री राम जी की अनन्य सेवा कर। दासभाव से उन्होंने श्रीराम जी को तथा सीता मईया को मुग्ध कर दिया और वह प्राप्त किया जो दूसरे प्राप्त नहीं कर सके। रावण ने वही तरीका अपनाया जैसे उसने शिव को प्रभावित किया था लेकिन शिव अकेले देवता किम्बा महादेवता हैं जो भक्ति से साधना में प्रतिकूल और अमर्यादित विधि भी स्वीकार कर लेते हैं। देवघर में बैजू द्वारा मार खाने पर भी प्रसन्न होकर अपने को वैद्यनाथ बनाये। अर्जुन के हाथों मल्लयुद्ध का आनंद पाकर पशुपतास्त्र प्रदान किये। रावण पुरुषार्थ से प्रभावित कर ब्रह्माण्ड का स्वामी बन रहा था। नष्ट हो गया शरणागति के अभाव में। महीवीर जी शरणागति दिखाये, प्रपत्ति मिली दास बने; सदा के लिये रह गये।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

गुरुदेव प्रभु श्री रामानन्द शास्त्री 'आनन्द' का टेप किया हुआ एक दुर्लभ प्रवचन

गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णु गुरुर्देवो महेश्वरः ।
गुरुः साक्षात् परब्रह्म तस्मै श्री गुरवे नमः ॥
अखण्ड मण्डलाकारं व्याप्तं येन चराचरम् ।
तत्पदं दर्शितं येन तस्मै श्री गुरवे नमः ॥
अज्ञानान्धस्य लोकस्य ज्ञानाञ्जन शलाकया ।
चक्षुरुन्मिलितं येन तस्मै श्री गुरवे नमः ॥
अखन्डं सच्चिदानन्दं गुरुं वन्दे परात्परं ।
साकारं सगुणं चैव निराकारं च निर्गुणं ॥
यः सर्वत्र सदा व्याप्तः सर्वस्यहितकारकः ।
यो माम् रक्षति सर्वत्र तस्मै श्री गुरवे नमः ॥

ॐ

पूर्व निश्यानुसार मुझे प्रार्थना के महत्त्व पर प्रवचन करना है । प्रार्थना के प्रसंग में मैं वैदिक प्रार्थना को, वेद के मंत्रों को प्रार्थना-रूप में अधिक महत्त्व देता रहा हूँ । वैदिक प्रार्थना-वेद के मंत्र प्राचीन ऋषियों की वे अनुभूतियाँ हैं जिनमें संसार के सभी समस्याओं का समाधान तो है ही, दुःखों, उद्वेगों, अभावों एवं आपत्तियों के विनाश के अवसर तो हैं ही; दुःख के अत्यन्त अभाव और सुख की चरम स्थिति की प्राप्ति का भी निर्देश है, जिसे हम ब्रह्मानुभूति कहते हैं । जिस निर्देश को हम शांति-प्राप्ति कहते हैं वे समस्त निर्देश हमारे वैदिक मंत्रों में, वैदिक प्रार्थना-समूहों में निर्दिष्ट हैं-आरोपित हैं । कहा जाता है, वैदिक मंत्रों में किसी भी एक मंत्र का जप अगर कोई ठीक से करता है, तो वह एक-न-एक दिन आत्मानुभूति प्राप्त कर लेता

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2
है । आत्मानुभूति को ही पुराण की भाषा में और कुछ दर्शन और वेदान्त की प्रा भाषा में केवलाद्वैत, शंकराद्वैत की भाषा में उसे ही ब्रह्मानुभूति कहते हैं । तो हमारे वेद के मंत्र हमारे लौकिक शरीर को समस्या-समाहित-पथ देते रहते हैं, साथ ही ब्रह्माण्ड की उन सभी बातों को बता देते हैं, ब्रह्माण्ड के उन सभी विषयों की अनुभूति करा देते हैं, ब्रह्माण्ड के अदृश्य वस्तुओं को दृश्य करा देते हें और दृश्यातीत जो ब्रह्म है, उसे अनुभूत भी कराते हैं ।

उन्हीं वैदिक मंत्रों में परमेश्वर की गायत्री भी है । इस गायत्री की कतिपय बार चर्चा चला चुका हूँ, किन्तु साधना की दृष्टि से और वह भी निकट से आज चर्चा चलानी है । यदि मन को व्यापक बनाया जाय अर्थात् हमारा मानस केवल हमारे कल्याण केलिए ही नहीं, बल्कि विश्व के कल्याण के लिए है – ऐसा भाव रखा जाय तो जहाँ मंत्र जपा जाता है, उस मंत्र से आगे जहाँ तक दृष्टि जायेगी, जहाँ तक हमारे मन की लहरें जायेंगी, वहाँ तक गायत्री मंत्र से रक्षा होगी । यों कहा जाय कि विश्व में किसी प्रकार का कल्याण करना हो तो गायत्री मंत्र की बाह्य ध्वनि से कल्याण किया जा सकता है, किया जाता है ।

संसार में जितने प्रकार के कीर्त्तन होते हैं, प्रत्येक कीर्त्तन में यदि मानस भी साथ है तो वह कीर्त्तन गानेवाला का रक्षक है । गायत्री शब्द का एक अर्थ यह भी है – "गायंतं गायते यस्मात् तस्मात् सा गायत्री इति कथ्यते ।" गानेवाले को वह रक्षित रखती है । जो शक्ति गानेवाली की रक्षा करती है, उसे गायत्री कहते हैं ।

अपने इष्टदेव का ध्यान करते हुए या प्रणव का ध्यान करते हुए यदि कोई मनुष्य कीर्त्तन करता है, मानस यदि कीर्त्तन के शब्दों के साथ है, तो निश्चत ही आधि-व्याधियों से मुक्त होकर सुरक्षित होता चलता है । उन भाग्यवानों की बात क्या कहुँ, जो हंस गायत्री की जप-धारा से अपने को खाली नहीं रखते । उन भाग्यवानों को क्या कहूँ जिनकी कुण्डलिनी से बराबर जप-ध्वनि निकलती रहती है । मैं उनको भी भाग्यवान मानने को तैयार हूँ जो लोग वैदिक मंत्रों में- विशेषत: गायत्री छन्द के मंत्रों से परमेश्वर की

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2
प्रार्थना करते हैं । जो लोग संसार में किसी भी कामना से प्रार्थना नहीं करते-केवल बुद्धि-विकास के लिए प्रार्थना करते हैं, हमारी बुद्धि विकसित हो, हम परमेश्वर के व्यापक तेज का ध्यान करते हैं, ऐसी भावना जिनलोगों के हृदय में है, वे निश्चित ही महात्मा होते चलते हैं । ऐसे महात्म्य भाव जिनके हृदय में हैं, उनकी गायत्री माता इसलिए भी रक्षा करती है क्योंकि वे अपनी रक्षा करने की भी बात नहीं सोचते । परब्रह्म का निर्देशक भी गायत्री ही है ।

हमारे उपविष्ट व्यक्तियों में, हमारे सामने उपस्थित व्यक्तियों मे हमारे गुरुजी, श्री रामनयनजी मिश्र और उपचार्य श्री रामायणजी एक ऐसे यज्ञ की विभूति बन गये थे, जहाँ इनलोगों ने गाकर इस बात को प्रमाणित किया कि गायत्री मंत्र वस्तुतः रक्षक है, और उस समय की याज्ञिक गायत्री परब्रह्म से संबंध रखनेवाली थी । सृष्टि के कण-कण में व्यापक जो तत्त्व हैं, जिसे गुरु-तत्त्व कहते हैं, उससे संबंध रखनेवाली थी और उस मंत्र से ये लोग आहुतियाँ देते थे । श्रोता लोग विमुग्ध होते थे, द्वेष रखनेवाले उद्विग्न होते थे और रागी लोग प्रसन्न होते थे । जिनका राग उस गायत्री मंत्र से था और ये सबलोग आपस में भी बहुत आनन्द का अनुभव करते थे । वह मंत्र परब्रह्म की गायत्री से अभिविहित है । उसमें भी कुछ विचित्र प्रार्थना की गयी है । इस मंत्र को मैं तीन बार पढ़ता हूँ, आप लोग भी तीन बार पढ़ेंगे ।

ॐ गुरुदेवाय विद्महे

परब्रह्मणे धी महि

तन्नो गुरुः प्रचोदयात् ।

(गुरुदेव के तीन बार पढ़ने के बाद हर बार शिष्यों ने दुहराया)

इस गायत्री मंत्र में परब्रह्म की प्रार्थना की गयी है । परब्रह्म मूलतः निर्गुण निराकार हैं । किन्तु भक्तों की इच्छा के अनुसार, भक्तों की कामना के अनुसार वह सगुण साकार रुप धारण करते हैं । जिनको आप गुरु मानते हैं उनके प्रति यदि आपकी असीम श्रद्धा है, तो परब्रह्म द्वारा उन्हीं से उनका

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2
आविर्भाव होता है, उन्हीं से प्रकाश होता है । वह गुरु-तत्त्व सृष्टि के कण-कण में वर्त्तमान है, व्याप्त है– सगुण रूप से, साकार रूप से । इसलिए उनका यह कार्य होता है कि देवताओं की उपासना करते हैं तो सम्भव है किसी देवता की उपासना करने के समय देवता यह भी चाहते हों कि हम विलम्ब से दर्शन दें, विलम्ब से कार्य करें अथवा एकदम निकटवर्ती होते हुए भी लुकाछिपी खेलते रहें । किन्तु परब्रह्म जिसे हम कहते हैं, जो हम गुरु शब्द से कहते हैं, जो सृष्टि के कण-कण में व्याप्त हैं, जो परम दयालु हैं, उनकी भावना यह कभी नहीं होती कि हम लुक-छिप कर कुछ करें । वे चाहते हैं कि हम रक्षा करें, हमें याद करता है तो सर्वसमर्थ होकर रक्षा करें । वे इस दृष्टि से रक्षा करते हैं कि सृष्टि के कण-कण में रहनेवाले और सृष्टि का कार्य जो विभाजनशील पालन और सृष्टि के बँटे-बँटे कार्यों की अपनी जिम्मेवारी लेकर वरुण, इन्द्र, सूर्य, गणेश आदि रूपों से, इन्द्रादि रूपों से, दुर्गा, शिव आदि रूपों से गुरु करते हैं । विभक्त रूप से गुरु का यह काम होता है । गुरु यानी परब्रह्म, इन सभी विभक्त रूपों से अपने को एकाकार समझें ।

परब्रह्म रूप गुरु की उपासना करनेवाले व्यक्ति को और वैदिक मंत्र जप करनेवाले, विशेषतः वैदिक गायत्री मंत्र जप करनेवाले व्यक्ति पर टोना नहीं लगा सकता है । डायन इसका कुछ नहीं बिगाड़ सकती । तंत्र-मंत्र जितने हैं– मारण, मोहन, वशीकरण, उच्चाटन सब फेल कर जाते हैं, उनकी शक्ति काम नहीं करती । बल्कि कभी-कभी ऐसा देखा गया है कि रिएक्शन (प्रतिक्रिया) होता है उनलोगों पर जो इस प्रकार के यंत्र-मंत्र-तंत्र की क्रिया करते हैं । भला व्यापक विचार जिसका-होगा, जो परब्रह्म की उपासना करेगा- उसके सामने छोटी-छोटी चीजें आ सकती हैं ? भला महान प्रकाशमान सूर्य के सामने कोई अंधकार टिक सकता है ? क्या कभी ऐसा भी हो सकता है कि शीतल जलवाहिनी को कोई एक लूक्के आग से गर्म कर सके ? क्या ऐसा सम्भव है कि क्षमाशील धरा को कोई कुछ कर सके ? क्या ऐसा सम्भव है कि शुन्य आकाश को कोई क्षण में विलीन कर दे ? यदि ये

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2
सब बातें सम्भव नहीं हैं तो यह भी सम्भव नहीं है कि परब्रह्म रूपी गुरु की उपासना करनेवाले व्यक्ति का कोई भूत-प्रेत, देवी-देवता, यक्ष-यक्षिणी कुछ बिगाड़ सके । तो वेद मंत्रों में ऐसी प्रार्थना की गयी है- **"ॐ गुरुदेवाय विद्महे परब्रह्मणे धी महि तन्नो गुरुः प्रचोदयात् ।"**

हाँ एक बात अवश्य है । इन बातों का प्रचार कौन करे - ऐसे मंत्रों का जिनकी चर्चा वेदों में है । कोई श्रेष्ठ व्यक्ति अगर कोई प्रचार करता है, जिससे आप मंत्र लेते हैं, तो वह अपना प्रचार करता है । कौन ऐसा निर्भय व्यक्ति है, जो संसार की गालियाँ और निन्दा सुनता हुआ भी यथार्थ को कहे ? अगर कहे भी तो इसमें भय है । क्यों नहीं हीरो वर्शिप (Hero worship) की बात समझी जाय, क्यों नहीं व्यक्ति-पूजा की बात समझी जाय, क्यों नहीं वीर-पूजा की बात समझी जाय ?

इसलिए इन सभी प्रकार के भय से, आतंकों से बचने केलिए हमारे वैदिक ऋषिों ने एक बड़ा अच्छा रास्ता निकाला । उनलोगों ने कहा-देखो ! यह ऐसा मंत्र हैं, जो ब्रह्माण्ड में रहनेवाले सबकी उपासना के लिए पूर्ण है-चाहे वे दुर्गा हों, सूर्य हों, गणेश हों, हनुमान हों, बटुक भैरव हों, ब्रह्म हों, गुरु हों कोई भी हों, गाँव का ब्रह्म ही क्यों नहीं हो ? इस मंत्र से यदि अनुष्ठान किया जाता है, इस मंत्र का जप किया जाता है, तो जो गुरु हैं, उनको भी इसके कहने में लज्जा नहीं है । **"ॐ भूर्भूवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धी महि धियो यो नः प्रचोदयात् ।"**

इस मंत्र की व्याख्या जितने दिनों में की जाय, कम ही है । किन्तु यह एक छोटा-सा अर्थ समझने के लिए अगर कह दिया जाय कि ब्रह्माण्ड व्यापक वह परमेश्वर जो सबको अपने-अपने कामों में लगाते हैं, श्रेष्ठ देव का हम ध्यान करते हैं, जो हमारी बुद्धि को अच्छे कामें में लगायें, तो अगर आप भगवान शिव का ध्यान करते हैं, इस मंत्र का जप करते हैं, तो शिव की शक्ति जो माता है, जिसे हम गायत्री माता कहते हैं, उसकी ड्यूटी हो जाती है कि आपकी साधना, आपकी उपासना में, आपके भजन में किसी प्रकार का विघ्न नहीं हो और भगवान शिव बाध्य हो जायें आपको दर्शन देने

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

के लिए । अगर भगवान विष्णु का ध्यान करते हैं, तब भी वह भी तो सविता हैं, जो अपने-अपने कामों में लगाते हैं । ईश्वर शिव लगते हैं तो विष्णु भी लगते हैं । सूर्य के उदय होने पर - शुभ काम करने पर सूर्य भी सविता हैं ।

कोई भी ऐसा देवता नहीं, कोई भी ऐसी देवी नहीं, जिसे हम सविता नहीं कह सकें । सविता का अर्थ है - जो सबको काम में लगाये ।

जिसका हम निरन्तर ध्यान करते हैं, वह हमारा इष्टदेव हमें कामों में लगाता है । वह हमारे लिए सविता है । हम जिसका ध्यान करते हैं, उसी के ध्यान से हम इस मंत्र का जप कर सकते हैं गायत्री मंत्र का और हमको करना भी चाहिए । इसलिए करना चाहिए - गुरुवर्ग भी इसको डंके की चोट पर कह सकता है कि इसमें कहीं भी गुरु शब्द नही आया है । किन्तु जो श्रेष्ठ तत्त्व हैं, ब्रह्माण्ड व्यापक हैं, जिसको गुरु, ब्रह्म या जिन शब्दों से-विष्णु, राम, कृष्ण, दुर्गा, हनुमान, गणेश, शिव आदि शब्दों से कह सकते हैं, उस तत्त्व का वर्णन इस मंत्र में है इसलिए इस मंत्र का जप प्रत्येक व्यक्ति को करना चाहिए । ब्राह्मणों को तो निश्चित करना चाहिये, क्योंकि गायत्री से जो विहीन हैं-ब्राह्मण क्षत्रिय, वैश्य उन्हें विषहीन सर्प की उपाधि दी गई है । और इसके अतिरिक्त भी जिस किसी जाति के हों; ईश्वर ब्रह्म किसी के बाँटे हुए नहीं हैं ।

उस ब्रह्म की उपासना करने के लिए, ईश्वर के किसी स्वरुप की उपासना करने के लिए इस मंत्र का जप करना चाहिए । जो लोग इस बात को स्वीकार नहीं करते हैं, वे लोग भी अगर राजयोग की ध्यानमयी क्रिया करते हैं, अगर वे चक्रभेदन क्रिया करते हैं, अगर कोई भी श्रेष्ठ क्रिया करते हैं, तो उनलोगों के भीतर इस मंत्र से ऐसी शक्ति प्राप्त होती है, और इस बात का अनुभव करते हैं कि हम छोड़ नहीं सकते । इसके बिना हमारी स्थिति नहीं है । हमारे सभी मन स्थानों में, हमारे प्राणों में, हमारी इन्द्रियों में, हमारे शरीर ओर शरीरातीता अवस्था में यह मंत्र व्याप्त है । जो कुछ हम देख रहे हैं, देखेंगे और देखा है उसी की व्याख्या इस मंत्र में है और भूत, भविष्यत् और वर्त्तमान काल्पनिक ही सही, इससे हमारा छुटकारा नहीं होगा । अगर

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2
इनसे हमारा छुटकारा नहीं है, तो गायत्री मंत्र से भी हमारा छुटकारा नहीं है। हम शब्दतः इसका जप करें या न करें, किन्तु अर्थतः हमको इसका जप करना पड़ता है। हम चाहे साधन-भजन, योग क्रियायें करें या नहीं करें, किन्तु जाने-अनजाने सब कार्य हम करते हैं। अगर हम सत्कर्म में लगे हुए हैं, तो हम गायत्री मंत्र की व्याख्या अपने जीवन में उतार रहे हैं। इसलिए हर मनुष्य को चाहिए कि अपने इष्टदेव का जो मंत्र जपते हैं, अपने इष्टदेव का जो ध्यान करते हैं, वह तो करें ही, लेकिन मन में किसी प्रकार का उद्वेग हो, कोई हाहाकार हो, किसी प्रकार की चंचलता आ जाय, अपने प्राप्त मंत्र में किसी प्रकार का अगर अविश्वास हो, कोई भी अगर ऐसी स्थिति आ जाय कि हम घबराहट में हैं, ऐसा भाव आ जाय कि हमने पाप किया है, हमारा उद्धार नहीं होगा, ऐसा भाव आ जाय कि हमारा कोई सहायक नहीं है, ऐसी स्थिति में वैदिक गायत्री का, किसी गायत्री का या जिसका मैंने जाप किया है, उस गायत्री का जप किया जाय। ध्यान स्थिर नहीं हो, इस मंत्र में जितने अक्षर हैं, एकांत में, नदी के किनारे, श्मशान में या पर्वत के ऊपर अथवा किसी घर में बैठकर, घी का दीपक जलाकर, घर को धूप-धूपित करके वातावरण के शान्त होने पर निशीथ में, रात में इस मंत्र का जप किया जाय तो प्रत्यक्ष अनुभव होगा कि हमारा शरीर कितना तेजोमय होता चलता है, हमने वातावरण को कितना प्रकाशमान बना दिया है। हमारी आपत्तियाँ, हमारे कष्ट, हमारे दुःख कैसे दूर होते चले जा रहे हैं। इसकी अनुभूति हम जप-काल में ठीक से करेंगे। आप जिस किसी मंत्र का जप एकांत में, रात में करेंगे, आपको यह अनुभव होगा कि हम सामान्य स्तर से ऊपर उठते चले जा रहे हैं। हमारी जितनी बुराईयाँ हैं, जो हमारे द्वारा की जाती हैं, अल्प हो जायेंगी, कम हो जायेंगी, ऐसा आपका भाव होगा। और उसके बाद जिस मंत्र का आप जप करते हैं, उस मंत्र की जो अधिष्ठात्री शक्ति है, वह शक्ति प्रसन्न होकर वरदान देने के लिए लालायित रहेगी। वह ब्रह्म की शक्ति हमारे सामने आकर हमसे कहेगी- वरं ब्रूहि, वर माँगो। और तब हमें सतर्क और सचेत रहना चाहिए। छोटी-मोटी कामनायें नहीं माँगनी चाहिए। हमें वह वस्तु माँगनी चाहिये जिस वस्तु के माँगने पर कोई वस्तु माँगने केलिए शेष नहीं रह जाती।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2
में यह बात पूछनी चाहिये कि जिस बात के पूछने पर कोई बात पूछने को शेष नहीं रह जाती। हमें ऐसा दिव्य दर्शन प्राप्त करना चाहिये, हमको ऐसे दर्शन और संगत करने चाहिये जिसके बाद दर्शनों की आवश्यकता नहीं हो।

हमें यह कह देना चाहिये कि –

त्वमेव माता च पिता त्वमेव,
त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव ।
त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव,
त्वमेव सर्वं मम देव देव ॥

हमें यह कहना चाहिये –

मत्समः पातकी नास्ति पापघ्नी त्वत् समा नहि ।
एवं ज्ञात्वा महादेवि यथा योग्यं तथा कुरु ॥

हमें यह कहना चाहिए –

माता च पार्वती साक्षात् पिता देवो महेश्वरः ।
बान्धवाः शिव भक्ताश्च स्वदेशो भुवनत्रयम् ॥

हमें यह कहना चाहिए, जैसे व्यास ने कहा है –

"न मे रिपुर्न में मित्रं न मे कश्चिद् परात्परः ।
सर्वं मित्राणि गीयन्तां सर्वं च कुशलं भवेत् ॥"

हमें यह कहना चाहिए कि सारा संसार सत्पथ की ओर चले। हमें यह कहना चाहिए कि हमारी आत्मा जो आपसे अभिन्न है, एकीकृत हो जाय और संसार की लीलाओं का हमें अनुभव हो। हम जिन मिथ्या चीजों की ओर भागते चले जा रहे हैं, उनको छोड़कर हम सत्पथ की ओर बढें। जो सत्य का स्वरूप आपका है, हमारे मन, उसकी तमाम लहर उसमें विलीन होती हुई बुद्धि-वृति मंत्र बनकर आपसे स्वीकृत और एकीभूत हो जाय।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2
तो हमारे वैदिक विद्वानों ने, वैदिक महर्षियों ने जिन मंत्रों का उद्भावन किया और जो प्रार्थना की, उन प्रार्थनात्मक मंत्रों में गायत्री मंत्र का विशेष स्थान है । जिस किसी देवता की गायत्री हो, अथवा पूर्ण ब्रह्म की, गुरु की गायत्री हो या "ऊँ भर्भूव भूर्वः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यम् भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात् ।" - यही गायत्री हो, इसका जप करते हुए हमें इष्टदेव का ध्यान करना चाहिए और अंतिम सफलता प्राप्त करनी चाहिए । जो व्यक्ति अपने जीवन काल में, अपने शारीरिक स्वास्थावस्था में ध्यान और जप नहीं करेंगे, आपत्तियों के आने पर, शरीर शिथिल होने पर और अस्वस्थावस्था में क्या करेंगे, जब घबराहट में केवल बाप-दादा शब्द ही उच्चरित होते हैं ।

इसलिए जीवन का प्रत्येक क्षण व्यर्थ न जाय, जप-ध्यान से खाली नहीं रहे । वैदिक ऋषियों के समान इन बातों पर ध्यान दिया जाय और वैसा सोचा जाय, वैसा किया जाय ।

वाणी से व्यर्थ की बातें बहुत हो गयीं तो सोने के समय स्वयं को धिक्कारा जाय । मन से व्यर्थ की बातें सोच ली गयीं तो अपने मन को धिक्कारा जाय । ऐसे काम कर दिये गये जिन कार्यों का करना अनुचित है, तो मन को धिक्कारा जाय । ऐसा करने से मनुष्य जहाँ है, वहाँ से ऊपर उठता है, वह प्रकाश की ओर जाता है और ध्रुव विजय प्राप्त करता है । तो वैदिक प्रार्थना में इस गायत्री मंत्र का ही विशेष महत्त्व है । इसलिए भगवान मनु ने भी कहा था -

सहस्रकृत्वस्त्वभ्यस्य वहिरेतत् त्रिकं द्विजः ।
महतोऽप्येनसो मासात् त्वत्रैवाहिर्विमुच्यते ॥

अधिक क्या, एक महीना भी कोई 1 हजार इस मंत्र को एक आसन में बैठकर जपता है, तब अपने पापों से उसे ऐसे छुटकारा मिल जाता है, जैसे मदमत्त सर्प केचुल छोड़कर अपनी देह को हल्का और स्फुर्त्त पाता है और भगवान मनु ने यह भी कहा है कि ऋग्वेद, यजुर्वेद और सामवेद से 'भूर्भूवः स्वः' को मैंने दूह लिया, "अ, इ, म" को मैंने दूह लिया । भगवती गीता

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2
ने भी कहा – "ओइम् तत्सदिति निर्देश:" ।

'ॐ तत् सत' – यह निर्देश ब्रह्म के लिए है । जो लोग ध्यान योग से, खुली आँखों से ध्यान करते हैं, उनलोगों के लिए भी 'तत् सत्' मंत्र से पिंड नहीं छूटता जिससे वे लोग समाधि में जाते हैं और समस्त देव वर्ग और ऋषियों के मध्य में दर्शन करते हैं । तो हम हर तरफ से देखते हैं और चारों ओर से देखते हैं कि हमारी इस गायत्री के मंत्र में जितने शब्द हैं, वे शब्द बड़े व्यापक हैं । किसी भी देवता का मंत्र हो, सामान्यत: उसमें 'ऊँ' तो चला ही जाता है और यह 'ऊँ' गायत्री मंत्र का संक्षेप है । इसलिए वेदो ने कहा– "प्राणौ वै मंत्राणां सेतु ।"

नदी पार करने का जैसे पुल होता है, वैसे "ॐ" सभी प्रकार के मंत्रों का पुल है और इस "ऊँ" को मैं गायत्री मंत्र का संक्षेप मानता हूँ ।

– क्रमश:

अमृत वाणी

1. तंद्रा, आलस्य को छोड़ दो । इससे पश्चाताप कम होगा ।
2. बराबर दूसरे की प्रतिष्ठा करो । यह आपकी ही प्रतिष्ठा कही जायेगी ।
3. बराबर भूख से कम खाओ । अधिक जल पीओ । खुली हवा में लम्बी सांसें लो ।
4. व्याग्रता के क्षणों में स्तोत्र-पाठ करना, क़ीर्तन करना, भजन गाना, नाम जपना या मंत्र जपना अधिक लाभप्रद सिद्ध होता है ।

– सम्पादक

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

गुरुदेव के हर विधान में कल्याण छिपा रहता है।

श्री बृज किशोर मिश्र

सन् १९८० की बात है । मुझे घर जाना था । आनन्द नगर आश्रम में सरकार ने कहा - देवरिया आश्रम से लौटूँगा तब घर जाइएगा ।

2 दिन बाद सरकार देवरिया से लौटे । वे आश्रम नहीं आये । गोपालगंज मोड़ पर भक्त लोगों के साथ रुके हुए थे । राय जी, इंजीनीयर साहब आश्रम से मुझे बुलाकर ले गये । वहाँ सरकार भक्त लोगों से सेवा ले रहे थे किन्तु उन्होंने मुझसे कोई बात नहीं किया । थोड़ी देर में इंजीनीयर साहब ने कहा कि सरकार का दर्शन मिल गया अब जाइए, सरकार मीरगंज जा रहे हैं । मुझे संतोष नहीं हो रहा था । मैं भी सरकार से आवश्यक बात करने हेतु इंजीनीयर साहब की गाड़ी से मीरगंज चला आया । सरकार की गाड़ी के पास वहाँ भी बहुत लोग खड़े थे, मैं भी वहाँ पहुँचा । मैं कुछ बात भी करना चाहता था । देखते-देखते सरकार गाड़ी से कहीं निकल गये । मुझे कुछ समझ नहीं आया । पता चला कि सिवान होते देवरिया चले गये ।

मुझें बहुत खराब लगा कि सरकार ने हमसे कोई बात नहीं किया, देखकर भी नहीं देखा । यही सोचता रहा । दुःखी मन घर के लिए अरेराज प्रस्थान कर दिया । मन बड़ा अशान्त था । तरह-तरह की बातें मन में आ रही थीं ।

एक सप्ताह बाद मैं आदेशानुसार घर से परिवार को साथ लेकर सिवान आ रहा था । गोपालगंज के आगे बस पलटी मार दिया । हल्ला मच गया । कितने गिरे, पड़े, भागे । लेकिन मैं बस से नहीं उतरा । बस में मेरा सामान था, साथ में पत्नी थीं और राकेश अभी बच्चा था । थोड़ी देर में हल्ला शान्त हुआ तो लोग आश्चर्य से कह रहे थे - कैसा आदमी है, उतरा भी नहीं । लेंकिन हमलोगों में किसी को कोई चोट नहीं आयी । मैंने समझा कि सरकार ने ही हमलोगों की रक्षा की है ।

आश्रम पर हमलोग ठीक-ठाक पहुँचे । श्री गुरुदेव जी से भेंट भी हुई

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

और बातें भी। अब मैंने समझा कि प्रभु का प्रत्येक व्यवहार कल्याण के लिए होता है, हमें संतुष्ट रहना चाहिए।

उनका स्नेह भी अच्छा, उनकी डाँट भी अच्छी।
उनका प्रेम भी अच्छा, उनका तिरस्कार भी अच्छा।
किन्तु यह सब अब भी मिल सकेगा ?

– बड़का मामा जी

बधाई
(जन्म दिन की)

– श्री विजयेन्द्र प्रसाद

सखी री आज आनन्द देव बधाई ॥
अदभुत लीला कहा बखानों,
मो से कही न जाई।
बहुविधि सेवक पूजन लागे
लखत हिया हुलसायी।
सखी री आज ....

● ● ●

धन्य मोक्षदा, एकादशी धनि,
जिस दिन प्रभु प्रकटे आई।
धन्य पितु-मातु भाग्य हैं तिहरो,
आनन्द जस सुत पाई।
सखी री आज ....

● ● ●

कलियुग में हरिभक्ति सिखाई
दुखियन के करे सहाई।
श्री गुरुदेव करीं जब किरपा,
तरे, मिले सेवकाई।
सखी री आज आनन्द देव बधाई ॥

● ● ●

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

"विविध गण्डान्त दोष तथा कूज दोष"-एक शास्त्रीय विवेचन

डा० राम विचार सिंह (सेवा निवृत्त प्राचार्य)

लगभग 2 माह पूर्व आश्रम के वरीय भक्त पं० श्याम नारायण झा जी ने मुझसे कहा कि गण्डान्त दोष तथा मेलापक में कूजदोष पर ज्योतिष शास्त्र के आंधार पर अपने मन्तव्य प्रकट करें ।

सच पूछा जाय तो गण्डान्त दोष जन्म के समय तथा विवाह पूर्व लड़का-लड़की की जन्म कुंडली में मंगला-मंगली अर्थात कूज दोष से सभी संबंधित लोग त्रस्त और भयभीत रहते हैं ।

गुण्डान्त त्रय अर्थात् पूर्णा तिथि पाँच (5), दस (10), पन्द्रह (15) तिथि (1) छः (6), ग्यारह (11) की सन्धियों में चार घटी ही तिथि गण्डान्त होता है । स्पष्टतया पूर्णिमा के अन्त की दो घटी तथा प्रतिपदा (एकम्) के आदिम दो घटी, दशमी की अन्तिम दो घटी तथा एकादशी की आदिम दो घटी; ऐसे ही तीनों जगह चार-चार घटी का समय गण्डान्त होता है ।

रेवती, अश्विनी, आश्लेषा, मेघा, ज्येष्ठा मूल – इन संधियों में चार-चार घटी नक्षत्र गणान्त कहे गये हैं । तीनो गण्डान्त जन्म, यात्रा आदि में मृत्युप्रद हैं । ज्येष्ठा एवं मूल के सन्धि में क्रमशः पाँच (5) और आठ (8) घटिकाएं महाविघ्नप्रद हैं । ये अभुक्त मूल संज्ञक हैं ।

वृहत्पाराशर होरा शास्त्र में पाराशर मुनि के अनुसार गण्डान्त त्रय तथा अभुक्त मूल में उत्पन्न जातक की शान्ति अवश्य करनी चाहिए । पाराशर के अनुसार मूल नक्षत्र में उत्पन्न जातकों की दोष शान्ति जन्म से 12वें दिन या शुभ दिन में या अष्टम वर्षान्त में करानी चाहिए । मृत्युञ्जय मंत्र का जप, पूजा, आराधना आदि जितेन्द्रिय होकर करना चाहिए । इस तरह से शान्ति करने से शुभ होता है । पाराशर ने कहा है कि पिता, माता या सोदर के जन्म नक्षत्र में यदि जातक का जन्म हो तो जातक या जातक का पिता या सोदर या जातक की माता का या किसी एक का मरण होता है । अतः नक्षत्र शान्ति के लिए नक्षत्र की सुन्दर प्रतिमा स्थापित करके अग्नि के ईशान कोण में कलश के ऊपर नक्षत्र मन्त्रों से अभ्यर्थन करें ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कृष्ण पक्षीय चतुर्दशी में जन्म अशुभप्रद होता है । इस चतुर्दशी के छः (6) भागों में प्रथम भाग में जन्म शुभ, द्वितीय भाग में पिता की मृत्यु, तृतीय भाग में जन्म से मातृमरण, चतुर्थ भाग में मामा विनाश, पंचम भाग में वंशक्षय तथा षष्ट भाग में जन्म से सम्पत्ति क्षय या आत्म विनाश होता है । यह भी कहा गया है कि तीन कन्याओं के बाद पुत्र का जन्म या तीन पुत्रों के बाद कन्या का जन्म हो तो इन स्थितियों में जातक का जन्म अशुभकारक होता है। शान्ति कराने से शुभ होता है ।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि नक्षत्र या तिथि के आधार पर जो गणान्त दोष होता है, वह लगातार चौबीश (24) घंटा नहीं रहता है । गण्डान्त दोष का घनत्व भी भिन्न-भिन्न होता है । अतः ज्योतिषी को चाहिए कि गणित के आधार पर शुद्ध गण्डान्त दोष का समय निर्धारित करने के बाद संबंधित गण्डान्त दोष के परिहारार्थ पूजा-अर्चना बतावे । केवल नक्षत्र का नाम देखकर गण्डान्त दोष की विभीषिका को दर्शाना हड़कम्प पैदा करता है। अतः ज्ञानवान पंडित या ज्योतिषी को कष्टसाध्य गण्डान्त का निरूपण जरूरी है । फिर भी मोटे तौर पर गण्डान्त दोष के निवारणार्थ पूजन-हवन आदि होते हैं तो कोई खराब बात नहीं । पूजा-पाठ से वातावरण ठीक रहेगा । पर मनोवैज्ञानिक रूप से भीतर-भींतर जातक के घर वाले भयभीत तो रहेंगे ही। अतः न्याय-बुद्धि आवश्यक है ।

कुछ विद्वान लग्न गण्डान्त की महत्ता भी मानते हैं । कर्क के अन्त की अर्द्ध (1/2) घटी और सिंह के आदि की अर्द्ध (1/2) घटी, इसी प्रकार वृश्चिक और धनु, मीन और मेष की संधि की एक (1) घटी लग्न गण्डान्त या राशि गण्डान्त कहा जाता है जो निधन प्रद है ।

अभुक्त मूल विचार पर मतभिन्नता है । नारद मुनि के अनुसार ज्येष्ठा के अन्त की दो (2) घटी और मूल के आदि की दो (2) घटी मिलाकर चार घटी अभुक्तमूल है ।

वशिष्ठ के अनुसार ज्येष्ठा के अन्त की एक (1) घटी और मूल के आदि की दो (2) घटी अभुक्तमूल है । वृहस्पति के अनुसार ज्येष्ठा के अन्त की आधी (1/2) घटी और मूल के आदि की आधी (1/2) घटी मिलाकर

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

एक (1) घटी अभुक्तमूल है तथा अन्य आचार्यों के मत में मूल के आठ (8) घटी और ज्येष्ठा के अन्त की पाँच (5) घटी अभुक्तमूल है । इसमें उत्पन्न जातक को त्याग देना चाहिए अथवा जातक का पिता आठ (8) वर्ष तक उसका मुह नहीं देखे । व्यवहारिक जीवन में अब ऐसा सम्भव नहीं है । पूर्व जन्म के संस्कार, माता-पिता का पुण्य संचय तथा भगवद् आराधना से इन दोषों का कुछ निवारण हो सकता है ।

अब मूल आदि नक्षत्रों के कुप्रभाव की ओर एक झाँकी प्रस्तुत है ।

कन्या जन्म नक्षत्र का फल इस प्रकार है :- मूल में श्वसुर हानि, अश्लेषा में सास नाश, ज्येष्ठा में जेठ नाश, विशाखा में देवर नाश । सामान्यत: मूल और अश्लेषा के चरण जन्म फल का रूप यों है -

मूल के प्रथम चरण में पितृ नाश होता है, जबकि अश्लेषा के चतुर्थ चरण में पितृ नाश का फल मिलता है । मूल के दूसरे चरण में मातृनाश जबकि अश्लेषा के तृतीय चरण में मातृनाश का कुफल मिलता है । मूल के तृतीय चरण में धन नाश होता है तो ठीक अश्लेषा के दूसरे चरण में धन नाश का कुफल मिलता है । मूल के चतुर्थ चरण में शान्ति निवारण से शुभ फाल मिलता है । अश्लेषा के प्रथम चरण में शान्ति यत्न से शुभ फल की प्राप्ति होती है ।

गण्डान्त मूल (छ: गण्डमूलों) की शान्ति के लिए जो समय सीमा पराशर मुनि ने ऊपर बताया है - उससे भिन्न मत कई राज्यों में मान्य हैं । सताईस 27 नक्षत्र होते हैं । हर नक्षत्र अपने सताईसवें दिन पुन: आता है । सम्भव है, कभी-कभी 27 दिन के दो-तीन दिन बाद वह संबंधित नक्षत्र आवे । प्रचलित विधान के अनुसार गण्डान्त मूल की शान्ति के लिए उसी नक्षत्र में पूजा-पाठ होता है जिस नक्षत्र में जातक का जन्म हो । शान्ति के लिए समय सीमा निश्चित नहीं है पर नक्षत्र वही रहता है । दस (10) वर्ष के भीतर संबंधित नक्षत्र में नक्षत्र शान्ति पूजा हो तो उचित और शुभ होता है । मेरी दृष्टि में जो नक्षत्र विशेष पर जोर दिया गया है, वह बिलकुल वैज्ञानिक और समीचीन है । हमलोगों के यहाँ इस शान्ति पूजा को 'सतईसा' पूजा कहते हैं । संभवत: 27 नक्षत्रों के आधार पर इसे 'सतईसा' पूजा की संज्ञा दी गई हो ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

जन्म-पत्र मेलापक विचार

विवाह पूर्व लड़का-लड़की की जन्म कुण्डली का मिलान किया जाता है ताकि वर-कन्या का जीवन सुखी हो। इस प्रक्रिया में गुण मेल जितना अधिक होगा उतना शुभ माना जाता है। इस मेलापक में वर्ण, वश्य, तारा, योनि, ग्रह मैत्री, गण मैत्री, भकूट (राशि कूट) और नाड़ी ये आठ प्रकार के कूट क्रम से एक-एक गुण में अधिक हैं। तात्पर्य यह कि वर्ण में एक गुण हो तो वश्य में दो तथा तारा में तीन इत्यादि इसी क्रम से गणना में लेना चाहिए। इस प्रकार इन सबके छत्तीस (36) गुण हैं। गुण विचार में सोलह (16) गुण तक त्याज्य है। अठारह (18) से बीस (20) तक मध्यम तथा इक्कीश (21) से तीस (30) तक उत्तम तथा आगे छत्तीस (36) तक अति उत्तम बताया गया है। मीन, वृश्चिक, कर्क, ब्राह्म वर्ण, मेष, सिंह, धनु क्षत्रिय, मकर, वैश्य और मिथुन, तुला, कुम्भ में शुद्र वर्ण राशियाँ हैं। कन्या के नक्षत्र से वर के नक्षत्र पर्यन्त और वर से कन्या के नक्षत्र तक गिना जाय और तब उममें नौ (9) का भाग देने से तीन (3), पाँच (5), सात (7) शेष रहे तो अशुभ है। परन्तु एक (1), दो (2), चार (4), छः (6), आठ (8), नौ (9) शेष रहे तो ये शुभ है। योनि मेलापक में वर-कन्या की योनि में ऐक्य हो तो शुभ, मित्र योनि से मध्यम और यदि शत्रु योनि हो तो अशुभ है। ग्रह मैत्री विचार में यदि कन्या और वर की राशि के स्वामी एक हों या मित्र हों तो पाँच (5) गुण; एक मित्र, दूसरे 'सम' हो तो चार (4) गुण; दोनो 'सम' हों तो तीन (3) गुण; एक मित्र दूसरा शत्रु हो तो एक (1) गुण; एक सम दूसरा शत्रु हो तो आधा (1/2) गुण; और दोनो परस्पर शत्रु हों तो शून्य (0) समझना चाहिए। एक ही नाड़ी में वर-कन्या का नक्षत्र हो तो विवाह अशुभ तथा यदि मध्य नाड़ी हो तो मृत्यु कारक है।

वर-कन्या की राशि एक हो, किन्तु जन्म नक्षत्र भिन्न हों, दोनों के नक्षत्र एक हो पर राशि भिन्न हो अथवा नक्षत्र एक हो परन्तु चरण अलग-अलग हो यानि भिन्न हो तो नाड़ी और गण दोष नहीं होता है। गण दोष, योनि दोष, वर्ण दोष तथा षडांगकादि यानि षड़ष्टक, द्विद्वादश, नवपंचक ये चारों केवल ग्रह मैत्री बनती हो तो दोष नहीं कर सकते हैं।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कन्या के जन्म नक्षत्र से वर का नक्षत्र दूसरा हो तो पतिनाशक होता है, इसलिए विवाह शुभ नहीं ।

मंगल यदि कन्या की कुण्डली में एक (1), चार (4), सात (7), आठ (8), बारह (12) स्थान (भाव) में हो तो पति का और यदि वर की कुण्डली में हो तो स्त्री घातक होता है । यदि वर या कन्या में एक की जन्म कुंडली में ऐसा मंगल का योग हो तो हानिकारक है और यदि दोनों की कुंडली में समान योग हो अथवा अधिक गुण मिलते हों तभी विवाह करना चाहिए । वर और कन्या किसी एक की कुंडली में उपर्युक्त अनिष्टकर्त्ता मंगल हो और दूसरे के उन्हीं स्थानों में शनि अथवा कोई भी पापग्रह हो तो उक्त अनिष्ट का नाश होता है । इसप्रकार का विचार चन्द्रकुण्डली से भी करना श्रेयष्कर है । यदि अनिष्टकारक मंगल के साथ शनि बैठा हो तो मंगल दोष (कूज दोष) समाप्त हो जाता है । कुछ लोगों कु अनुसार मंगल और राहु की युति (दोनों का एक साथ होना) कूज दोष दूर करता है । पर ऐसा लिखित प्रमाण मुझे नहीं मिला है । लग्न में मेष का, द्वादश में धनु का, चतुर्थ में वृश्चिक का, सप्तम में मकर का तथा अष्टम स्थान में कर्क राशि का मंगल हो तो अनिष्टकर मंगल नहीं होता है । पर यह सर्वमान्य नहीं । व्यवहार में ऐसी स्थिति आने पर भी पंडितों को शादी के लिए विधान देना ठीक नहीं । कुछ आचार्यों का कथन है कि दूसरे स्थान (2) में मंगल की स्थिति भी अनिष्टकारी है । पर दूसरे स्थान में स्थित मंगल को पाराशर ने अनिष्टकर नहीं बतलाया है । देवकी नन्दन सिंह ने भी ज्योतिष रत्नाकर में ऐसे मंगल को अनिष्टकारक नहीं बतलाया है । दूसरे स्थान में मंगल, मंगली नहीं है । जन्म से सम संख्यक वर्षों में कन्या का और विषम वर्षों में पुरूष का विवाह कराना शुभप्रद है ।

किसी भी एक नाड़ी में वर-कन्या दोनों के नक्षत्र पड़ने से विवाह होने पर उनकी मृत्यु होती है । परन्तु गौतमी नदी से दक्षिण के देशों में प्रत्येक वर्ण के क्षत्रिय आदि वर्णों के लिए कदाचित आदि और अन्त्य नाड़ी दुष्ट नहीं होती परन्तु मध्य नाड़ी सदा और सर्वत्र दुष्ट ही होती है ।

तात्पर्य यह कि मध्य नाड़ी का दोष सभी देशों में लगता ही है ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

उसका परिहार नहीं है । यदि कन्या और वर के राशीशों में परस्पर मैत्री हो तो द्विर्द्वादश और नव पंचक दोष नहीं लगता है । दुष्ट भकूट में और ग्रह मैत्री के अभाव में नर गण और राक्षस गण का परस्पर संबंध शुभ नहीं होता है। कन्या के नक्षत्र से वर का नक्षत्र दूसरा हो तो नृदूर दोष कहते हैं । यदि वर-कन्या की ग्रह-मैत्री और योनि मैत्री बनती है तो यह नृदूर दोष शुभ हो जाता है । वर-कन्या की परस्पर राशि दो-बारह (2-12) हो तो दरिद्रता हो, छः-आठ (6-8) हो तो मरण हो, पाँच-नौ (5-9) में अपुत्रता हो और तीन-ग्यारह (3-11), चार-दस (4-10), सात-सात (7-7) अथवा एक ही राशि में होने पर अनेकों सुख-सौभाग्य, धनादि होते हैं ।। एक नक्षत्र में वर-कन्या के एक ही चरण न हो । अर्थात् एक नक्षत्र में चरण भिन्न-भिन्न हों । एक ही राशि हो और नक्षत्र भिन्न-भिन्न हों या एक ही नक्षत्र में भिन्न-भिन्न राशि या राशि एक ही हो पर चरण भिन्न-भिन्न हों तो इन चारों स्थितियों में गण का विचार, ग्रह मैत्री, नाड़ी, वश्य, नृदूर दोष देखने की आवयकता नहीं होती । तात्पर्य यह कि ऐसी स्थिति में दोष आदि का विचार नहीं होता है ।

लग्न से एक (1), चार (4), सात (7), आठ (8), बारह (12) में स्थित मंगल हो और शुभ ग्रह के योग या दृष्टि से विहीन हो तो पराशर के अनुसार कन्या विधवा हो जाती है । उक्त स्थान में चन्द्रमा से भी भौम (मंगल) या शनि हो तो स्त्री के पति का निधन होता है । यदि पुरुष की कुंडली में इन स्थानों में हो तो स्त्री का मरण होता है । दोनों की कुंडली में यह स्थिति हो तो कल्याण कहना चाहिए ।

ऐसा भी मत है कि जो मंगल एक (1), चार (4), सात (7), आठ (8), बारह (12) में अनिष्टकर्त्ता होता है ठीक उसी तरह पापी ग्रह भी इन स्थानों में करीब-करीब वही फल वर-कन्या की कुंडली में देते हैं । ऐसे राहू, केतु, शनि, सूर्य की कमोवेश इन स्थानों में वही फल देते हैं ।

अनिष्टकारी पापी ग्रह के कुप्रभाव की गणना गणित के अंको में सम्भव नहीं है । परन्तु गणित का सहारा लेकर कुछ विद्वान इन पापी ग्रहों की अनिष्टता का अनुमान या अंदाज लगाते हैं । इसे विज्ञान के सिद्धान्त की तरह

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS MoE Grant-2
हू-ब-हू सही या दुरुस्त नहीं माना जाना चाहिए । फिर भी उनके अनुसार अनुमान के लिए ऐसा प्रतिशत में दिखलाना भी अधिक समीचीन है ।

मंगल की अनिष्टता - 100%

शनि की अनिष्टाता - 85%

राहू की अनिष्टता - 75%

केतु की अनिष्टता - 50%

सूर्य की अनिष्टता - 40%

इस तरह के प्रभाव को जानकर कुछ आचार्यों का मत है कि मंगली योग वर या कन्या की कुंडली में हो, किन्तु दूसरी के कुंडली में उन्हीं स्थानों में शनि या राहू या केतु का योग हो तो मंगली योग का परिहार बहुत अंशों में हो जाता है । यही विचार चन्द्र कुण्डली से भी करना चाहिए । निष्कर्षत: वर-कन्या की कुण्डली में मेलापक के समय ऐसा योग आता हो तो शादी का विधान दिया जा सकता है ।

एकाधिपत्य योग सभी योगों से तुल्नात्मक रूप से महत्त्वपूर्ण है । यदि दोनों की (वर-कन्या) की राशि का अधिपति एक हो और नक्षत्र के चरण भिन्न-भिन्न हों तो एकाधिपत्य योग लगता है । एकाधिपत्य योग में नाड़ी, वर्ण, वश्य आदि में मेल नहीं रहने पर भी शादी शुभ होती है । यदि कन्या की कुंडली में मंगली योग प्रबल हो, छः (6), आठ (8), बारह (12) स्थान में पापीग्रह का प्राबल्य हो और वर की कुंडली में मेल नहीं होने से लड़की की शादी में बहुत विलम्ब हो जाता हो, उम्र ज्यादा हो जाय तो वैसी हालत में अनुभवी पंडितों ने बतलाया है कि गणेश की मूर्ति, केला के स्तम्भ या फल वृक्ष से उक्त लड़की की शादी की विधि पूरी करके उस वर से भी शादी की जाय जिसकी कुंडली में उतना कुयोग नहीं है ।

इति शुभम्

डा० राम विचार सिंह,
सेवा निवृत प्राचार्य,
सलेमपुर, महादेवा (सिवान)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitized by eGangotri Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

Shelter of Saints

संत शरण

– श्री बाँके बिहारी सिंह

The modern man, a busy soul
He is running fast towards his goal
Material gains, of course, he makes
For this, he under goes all pains

आज का मानव सदा व्यस्त है
निज उद्देश्य से सदा त्रस्त है ।
भौतिक सम्पदा अर्जित करता
इस हेतु वह सबकुछ सहता ।

The real goal of life is lost
We have'nt thought of that almost
Material pleasures are indeed
Not the things that we need.

वंचित हैं सच्चे उद्देश्य से
कभी न सोचा अपने मन से ।
जीवन का उद्देश्य यही क्या ?
यही हमारी आवश्यकता ?

They vanish soon as they come
The fact is known to only some
We never look within ourself
We are busy for the pelf

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

क्षण भंगुर है इनका जीवन
इसको जानें केवल गुरुजन ।
अन्तर्दृष्टि न मेरी होती
हरदम करते धन की खेती ।

They know where the pleasures lie
They know false is worldly tie
The subtle vision of life they keep
Their probing eyes go in deep

सच्चा सुख कहाँ बसता है ?
भव-बंधन का क्या रिस्ता है ?
इसका ज्ञान वही देते हैं
सूक्ष्म दृष्टि वे भर देते हैं ।

Pleasure lies in leaving pleasures
If is for man the greatest treasure
The saints and seers always preach
It is the greatest truth they teach

सुख परहेज ही सुख देता है
ज़ीवन निधि से भर देता है ।
द्रष्टा-संत यही कहते हैं
परम सत्य जीवन का है यह ।

They will make thy life sublime
There you will know all that is prime.
The supreme self you will then realise
Discarding foolishness they make you wise.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

जीवन को उत्कृष्ट करें वे
सकल निधि से इसे भरें वे ।
परम सत्ता का भान कराते
मूढता भगाते ज्ञान बढ़ाते ।

You will then know that the world is deception
It will never give you any perfection
That indeed is the goal of life
Needless is all struggle and strife

जीवन धोखा और कुछ नहीं
पूर्णता इसमें कहीं नहीं है ।
जीवन व्यर्थ गया यह मेरा
यह मेरा उद्देश्य नहीं है ।

Real peace of life lies in Him
He is all peace and all bliss.
Then try to know Him through the saints
It is so easy without any pains.

परम सत्ता ही सही शांति है
सत् चित और आनन्द वही है ।
संत सेवा सब सुलभ बनाती
परम सत्य का ज्ञान कराती ।

Shri Banke Bihari Singh
Retd Principal
Narain Maha Vidyalaya
Goriakothi (Siwan)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मैं हूँ

– श्री म.म. राय, प्राक् मुख्य अभियंता

मेरे-प्रियातिप्रिय, मधुराति मधुर, निश्छलाति निश्छल, सूक्ष्माति सूक्ष्म, मुझसे अभिन्न "तुम" !

मैं सृष्टि के कण-कण में व्याप्त हूँ। मेरे तुम आत्मीय, अति आत्मीय हो, फिर भी मैं तुम्हें दिखाई क्यों नहीं देता ? माया का आवरण जो हमारे और एवं तुम्हारे बीच फैला हुआ है ।

तुम साहब हो, मंत्री हो, डाक्टर हो, इंजिनियर हो, आचार्य हो, प्राचार्य हो, वकील हो, गृहस्थ हो, समाचार पत्रों के मालिक हो, सम्पादक हो, संवाददाता हो आखिर हो न किसी न किसी पेशे में ।

तुमलोगों को अपना कहलाने के लिए अपनी पत्नी है, माँ है, पिता है, भाई है, भतीजा है, बहन है, दादा है, दादी है । साथ ही अन्य प्रकार के विविध सम्बन्ध हैं । मेरा कौन है, केवल तुमको छोड़कर । मैं जाऊँ तो जाऊँ कहाँ ? मेरी भूख तो तुम्हारी मधुर मुस्कान में निहित है । चाहे तुम हँसो, रोओ, गावो, नाचो हर परिस्थिति में मैं तुम्हारे साथ छाया की तरह पीछा नहीं छोड़ता हूँ । मुझे छूना चाहते हो, दूर हो जाता हूँ । मुझे तुम्हारी निश्छला प्रीति ही सबसे ज्यादा प्रिय है । उसी की भूख मुझे रहती है । तुम चैन चाहते हो, परिवार-सुख चाहते हो, मकान चाहते हो, कार चाहते हो, पद चाहते हो प्रतिष्ठा चाहते हो । मैं, तुम्हारी आँखों में, मेरी याद में कितने क्षण अश्रु प्रवाहित होते हैं, उसकी प्रतीक्षा में रहता हूँ । मुझे याद कर रोते हो तो मैं तुम्हारे पीछे पागल होकर घूमने लगता हूँ । गोद में लेकर तुम्हें चुप कराने के लिए तरह-तरह के खिलौने लाकर रख देता हूँ । तुम उसे पाकर मस्ती में मुझे भूल जाते हो । फिर वही कर्म-बन्धन में फँसकर नाना प्रकार के सकाम कर्म करते और अपने कर्मों का फल भोगते हो । कहते हो कि हे भगवान ! मेरा बेड़ा पार करें । मेरे प्रिय ! तुमने कभी सोचा है कि मैं रात-रातभर जगकर

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तुम्हारे लिए आँसू बहाता हूँ कि काश क्षण भर मेरे आने की आहट को सुन सको। पर तुम तो सोने में इतना मस्त हो जाते हो कि कुछ चिंता ही नहीं रहती कि कौन आया, कौन गया।

तुम्हें पत्नी के साथ रति की बात तो समझ में आती है परन्तु ''मैं'' की प्रिति में रत होने की बात समझ में नहीं आती है और भजन करना भूल जाते हो। बीमार पड़ते हो तो मैं दिन-रात तुम्हारी देखभाल करता हूँ परन्तु तुम आह माई, आह बाप करते हो। उस समय अपना परिवार ही प्रिय लगता है। आह गुरुदेव, आह भगवान कहाँ करते हो ?

मेरे प्रिय, अति प्रिय तुम ! तुम हाहाकार में जी रहे हो। अपनो की खोज कर रहे हो। अपनों का अपना कोई नहीं होता है। अपनो का अपना एकमात्र वही है जो ''मैं हूँ।'' अतः ''मैं हूँ'' कहते समय सोचना है कि यह मैं कौन है। सब कहते है कि मैंने यह किया, मैंने यह लिखा है। मैंनें यह पढ़ा है। यह सब माया का प्रपंच है जो चल रहा है, चलता रहेगा। वह ''मैं ही'' सर्वव्यापक है। मैं को पहचानना ही अपने आप को पहचानना है। तुम अपने ''मैं'' के चक्कर में नहीं पड़ो। ''मैं'' बाहर है, भीतर है, सर्वत्र है; सर्वस्य हितकारक है। वही सर्वदा, सर्वत्र हमारी रक्षा करता है। संसार एक पनघट है जिसमें जीव अपने-अपने कर्मो, संस्कारो के अनुकूल अन्तःकरण रूपी घट में आंकाक्षाओं का जल भरे हुए है। आकांक्षायें कभी पूर्ण नहीं होतीं, वैसे ही जल अपूर्ण होकर छलछल कर बाहर कुछ-न-कुछ गिरता रहता है। यह ''मैं'' ही तुम जीवों को महासागर प्रभु से एकात्म करता चलेगा। अतः मैं को पहचानो। मैं की शरण गहो। श्रद्धा- विश्वास ही गुरु है। विश्वास ही आत्मा है। अतः अपनी आत्मा ही गुरु है और यही ''मैं'' हूँ।

– श्री मधु मंगल राय

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कुछ क्षण गुरुदेव (स्वरूपस्थ आचार्य रामानन्द) जी के साथ

– आचार्य श्याम नारायण झा

मेरे गुरुदेव जो पूर्णब्रह्मपरमेश्वर के अवतार थे, जिनकी लीलाएँ वर्णनातीत है; शेष, शारदा और गणेश भी अनन्त काल तक पृथ्वी रूपी कागज पर लिखने पर भी पार नहीं पा सकते हैं, अर्थात शेष रह जाता है । जिस महाप्रभु की ब्रह्मा, विष्णु और शम्भु भी अहर्निश सेवा करते हैं, माँ जगदम्बा भी चरण-चम्पन करती हैं, यह उसी सद्गुरु की अहैतुकी कृपा है कि मैं कुछ लिखकर उनकी सेवा कर लेता हूँ ।

संसार के सभी योगियों ने एक स्वर से कहा है कि गुरु की आज्ञा को बिना सोचे-समझे अक्षरशः पालन करना चाहिए, इसी में शिष्यों का कल्याण है । जाने-अनजाने उनके मुख से जो वाणी निकल जाती है वह प्रतिफलित होकर रहती है । असम्भव भी सम्भव हो जाता है ।

उनकी कृपा से उनके प्रसंग में जिस व्यक्ति विशेष का स्मरण हो जाता है, वे भी बड़े भाग्यवान हैं । एकबार भी जिन्होंने उस महाप्रभु के चरणों का स्पर्श किया है, कभी-न-कभी उनका उद्धार होगा ही । वह धरती भी तीर्थ बन गयी, जहाँ उनके चरण चले गये । हममें से जिन भक्तों को जितनी सेवा का अवसर मिला है वे अधिक पुण्यार्जन किये हैं या यों कहिए कि उनके पूर्व जन्म की विशेष तपस्या थी ।

मेरे गाँव के श्री चन्द्रेश्वर झा मेरे सुख-दुःख के साथी थे । वे मेरे साथ रहने के कारण गुरुदेव जी से अधिक प्रभावित हो गये थे । प्रायः 1948 के अन्त में जब मैं गुरुदेव जी के साथ द्वारका दास संस्कृत महाविद्यालय में पढ़ता था - तो वे वहाँ भी पहुँच गये थे । महाप्रभु की कृपा से वहाँ मझौलिया चीनी कारखाना में उनकी नौकरी की भी व्यवस्था हो रही थी, पर उनका भाग्य साथ नहीं दिया ।

समय बीतता गया । मेरे सम्पर्क से मुजफ्फरपुर में भी गुरुदेव के साथ

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE Grant-2
रहने का उन्हें सौभाग्य प्राप्त हुआ था । जब गुरुदेव जी सीवान में लगड़ना बर (शांति वट-वृक्ष) के नजदीक आनन्द औषधालय की स्थापना कर विश्व की सेवा कर रहे थे, उस समय भी वे वहाँ पहुँच गये । वे अपनी जीविका निर्वाह की अच्छी व्यवस्था चाहते थे । उस समय स्थानीय जिला सिवान के सरौत गाँव के निवासी प्रसिद्ध जमींदार, उदारचेत्ता विद्वान प्रेमचन्द वर्मा जी आश्रम के औषधालय में गुरुदेव जी की सेवा में सदा संलग्न रहते थे । महाप्रभु गुरुदेव जी ने भक्त वर्मा जी से कहा कि आप चन्द्रेश्वर जी को अपने घर ले जाइए । वहीं होमियोपैथिक चिकित्सा का अभ्यास करेंगे । भक्त वर्मा जी आदेशानुसार उनको अपने घर ले गये । वे उनके यहाँ रहने लगे । प्रभु कृपा से दूसरे दिन रोगी भी आया, जिसको चन्द्रेश्वर जी ने दवा दी । उसने चिकित्सक को विशेष दक्षिणा भी दी । डॉ० चन्द्रेश्वर झा पान जर्दा के व्यसन में मस्त रहते थे । उन्होने उस पैसे को पान, जर्दा में खर्च कर दिया । गुरुदेव जी ने कहा था कि प्रथम दिन की आमदनी को सत्कर्म में खर्च करना, पर व्यसन में लीन होने के कारण आदेश पालन में समर्थ नहीं हो सके । अगर आज्ञा पालन करते तो उन्हें वहाँ बहुत बड़ी आर्थिक आमदनी होती, उनकी परेशानी का समाधान हो जाता । वे निराश होकर पुनः अपने घर चले गये । लेकिन गुरुदेव जी की स्मृति बनी रही । प्रायः 1956 की बात है । गुरुदेव जी से उनका पत्राचार होता था ।

<u>मेरे प्रथम पुत्र का जन्म –</u> मैंने पहले ही लिखा है कि गुरुदेव जी से चन्द्रेश्वर जी भी पत्राचार करते थे । किसी पत्र मे उनसे लिखा गया कि श्यामनारायण झा को पुत्र हुआ है । भ्रमवश गुरुदेव जी ने दीर्घायु होने के लिए पत्र भेज दिया । उस समय मेरे पुत्र की कोई सम्भावना नहीं थी, लेकिन गुरुदेव जी की जो वाणी निकल गयी थी वह समय से पूर्व ही मेरे पुत्र पुरुषोत्तम के जन्म का कारण हुआ । वास्तव मे उसके जनक-जननी गुरुदेव जी की वाणी ही हुयी ।

डा० चन्द्रेश्वर जी गुरुदेव जी से सम्पर्क बनाये रहे । उनके तृतीय और चौथे पुत्र का यज्ञोपवीत संस्कार मुजफ्फरपुर में हुआ । यज्ञोपवीत हो जाने के

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

बाद सर्व अन्तर्यामी गुरुदेव जी दोनों के पास पहुँच गये । दोनों ने उनका आशीर्वाद प्राप्त किया और धन्य हो गये । कतिपय भक्तों की प्रार्थना करने पर, अधिक व्याकुलता के साथ आग्रह करने पर भी गुरुदेव उनके पास नहीं भी पहुँच पाते थे । वे अशरण-शरण, दीनदयाल, गुरुदेव उन भाग्यवान पुत्रों को दर्शन दे दिये । अमोघ आशीर्वाद से बलवान बना दिये । दोनों लड़के स्वस्थ सानन्द जीविका निर्वाह की अच्छी व्यवस्था में संलग्न हैं ।

चन्द्रेश्वर जी भी आश्रम में गये । कुछ गलती भी हो गई । उन्हें स्वतंत्रता सेनानी के रूप में सरकारी अनुदान प्राप्त करना था । गुरुदेव जी की कृपा से सोमवार के दिन 108 बार जलाशय से जल लेकर भगवान शिवजी को स्नापन कराया । गुरु कृपा से सफलता मिली । आश्रम में भी गये । पर जो संकल्पित राशि समर्पित करने के लिए वचनवद्ध थे उसका अपालन हुआ ।

आज वे शरीर में नहीं हैं, आशा करता हूँ उर्ध्व लोक में अवश्य होंगे । प्रायः 1965 की बात है । आनन्द नगर आश्रम मे मैं गुरुदेव जी आनन्द जी के साथ आनन्द लूट रहा था । मेरे मन में एक विशेष चिन्ता आ गयी कि इतनी पुस्तकें गुरुदेव जी की छपती हैं पर अधिकांश पुस्तकें आश्रम में ही पड़ी रह जाती हैं । भक्त लोग विक्रय का प्रयास भी नहीं करते हैं ।

कभी-कभी गुरुदेव जी भक्त के मन की बातें भी कह देते थे । उन्होंने कहा- क्या सोंचते हो ? एक समय आएगा जब नर-संहार होगा-विश्व युद्ध होगा । तदन्तर मेरी पुस्तकों के ग्राहकों की संख्या अत्यधिक बढ़ जाएगी । छापने में तथा बेचने में भक्तगण व्यस्त हो जाएँगे । मेरे मन में यह बात घर कर गयी । कभी न कभी परमाणु बम का प्रयोग होगा और नर-संहार होगा ही जैसा गुरुदेव जी ने कहा था । इसी उद्देश्य से मैं चाहता हूँ कि जो गुरुदेव जी का साहित्य अनुपलब्ध है, उनको प्राप्त कर आश्रम में रखा जाय । जो पुस्तकें नहीं छपी हैं और आश्रम में प्राप्य नहीं हैं उसका पुनः संस्करण निकाला जाय । भावी भक्तों के लिए गुरुदेव का साहित्य ही सर्वस्व है । इसी के माध्यम से गुरुदेव जी से लोग लाभान्वित होंगे । क्योंकि अतीत के

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

महापुरुषों को, ज्ञानियों को, अवतारों को भी लोग साहित्य के द्वारा ही जानते हैं। मैं भक्तों से आग्रह करता हूँ कि आपके सामने जो गुरुदेव जी की ललित लीलाएँ घटित हुयी हैं, उनको लिखित रूप में देकर पंत्रिका में छपवाएँ। मैं तो आग्रह ही कर सकता हूँ।

एक बार जब गुरुदेव जी कलकत्ता में भ्रमण कर रहे थे, एक अवधूत ने कहा था - विजय मिला और "विजयेन्द्र ? ऐसे ही कुछ कहा था। महाप्रभु ने श्रीमुख से कहा था - विजयेन्द्र मेरा परिवारिक भाई है। मेरे छोटे भाई परमानन्द जी के बाद उसका जन्म हुआ था। कुछ दिनों के बाद वह उस शरीर से अलग हो गया। मैंने उस समय पूछा था- यह क्या हुआ ? आवाज आयी-यह तुझे फिर मिल जाएगा। समय विशेष में वही लड़का विजयेन्द्र (इंजीनियर) बनकर मिल ही गया।" बराबर कौआहाँ जाता था। गुरुदेव जी के परिवारिक भाइयों को तथा अन्य लोगों को परिवारिक समझता था। गुरुदेव जी के माता-पिता जी भी उन्हें पुत्र के रूप में समझते थे।

इस सम्बन्ध में मुझे गुरुदेव जी के पिता पं० कृष्णदेव मिश्र की मधुर स्मृति नवीन हो जाती है। प्रातः स्मरणीया ईया जी, गुरुदेव जी की पूज्या माता जी का भी स्नेह नूतन बन जाता है। गुरुदेव जी के पिता जी मुझे बहुत मानते थे। वे मंत्र शास्त्र के विशेषज्ञ थे। आग्रह करने पर उन्होंने कहा था- मैं तुम्हें सब मन्त्र बता दूँगा। पर मेरे भाग्य में नहीं था। मैं उनसे आशीर्वाद के अतिरिक्त कुछ भी नहीं ले सका। ईया जी से मैंने एक वरदान लिया, जो लिखने में असमर्थ हूँ।

गुरुदेव जी के भाई परमानन्द जी भी मुझे बहुत मानते थे। गुरुदेव जी ने शरीर छोड़ने के पहले कहा था - मेरे घर जाओ, परमानन्द जी से मिलो, लेकिन मैंने अनसुनी कर दी। क्या जानता था कि गुरुदेव जी इस शरीर में नहीं रहेंगे और तब मैं वहाँ नहीं जा सकूँगा। अब तो सजल नयन स्मृति ही मात्र साथ है। बहुत-सी बातें गुरुदेव जी ने कहा था पर मैंने ध्यान नहीं दिया। सोचता था इस जन्म में नहीं हो सका। पर अब उनकी कृपा से विश्वास होता जा रहा है कि सर्वव्यापक गुरुदेव जी इसी जन्म में मेरी अप्रत्याशित कामना

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

को निश्चित पूर्ण करेंगे अर्थात् पूर्ण काम बना देंगे ।

गुरुदेव जी की इतनी बड़ी कृपा है कि वर्त्तमान माता जी शरीरस्थ होकर भी साक्षात दुर्गा हैं, लक्ष्मी हैं । उनकी कृपा से ही यह विश्वास तथा श्रद्धा मेरी दिन दूनी रात चौगुनी बढ़ती जा रही है । उनकी किसी क्रिया-कलाप के बारे मे कुछ सोचना नहीं चाहिए, वह जो करती हैं विश्व कल्याण के लिए ही करती हैं । गुरुदेव जी की आज्ञा ही सर्वोपरि है । गुरुदेव जी मार्ग प्रदर्शन कर रहे हैं । वही श्रद्धा-विश्वास बढ़ा रहे हैं । विश्वास है इस भवसागर से निश्चित पार करेंगे । अब मेरी लेखनी रुक रही है । जो प्रभु ने लिखाया, मैंने भी लिखवा दिया । लिखने वाली भी साधिका है, शक्ति है, वह भी समय पर उपलब्ध है जिसने मेरी पीयूष-बल्ली पत्रिका में पर्याप्त सहायता की है । पुनश्च, गुरु कृपा होने पर -

आचार्य श्याम नारायण झा

अनुलेखिका

पुष्पा चौधरी (एम.ए.)

विशेष वार्ता

प्रभु कृपा से मुजफ्फरपुर में प्रत्येक माह के दूसरे रविवार को सत्संगियों का सम्मेलन होता है । श्रद्धा-भक्ति के साथ लोग मासिक सत्संग में उपस्थित होते हैं जहाँ श्री गुरुदेव जी का रविवारीय कीर्तन भी सम्पन्न होता है ।

अनुरोध है कि प्रत्येक भक्त परिवार प्रत्येक रविवारीय अवकाश के दिन अपने घर पर भी कम-से-कम 1 घंटा या 2 घंटा सुविधानुसार प्रभु कीर्तन अवश्य करें और आंशिक अष्टयाम का फल प्राप्त करें ।

\- आश्रम परिवार ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

जन्म-कथा

डा० रामायण उपाध्याय

यह कथा महर्षि वेदव्यास के जन्म के संबंध में है ।

एकबार पाराशर ऋषि कहीं जा रहे थे । रास्ते में नदी के किनारे पहुँचे । उस समय वहाँ का मल्लाह दाशराज भोजन कर रहा था । दाशराज ऋषि से प्रतीक्षा कैसे करवा सकता था ? उसने अपनी पुत्री सत्यवती से नदी पार कराने के लिए कहा ।

उसकी पुत्री सत्यवती अत्यन्त सुन्दरी थी परन्तु, उसके शरीर से मछली की दुर्गन्ध आती थी । सत्यवती मुनि को नाव पर बैठाकर नदी पार कराने लगी । परन्तु आश्चर्य, जितेन्द्रिय ऋषि का मन उस सुन्दरी कन्या के प्रति आकृष्ट होने लगा । ऋषि ने उस कन्या से कहा – अवश्य ही कोई अच्छी घटना घटित होने वाली है, इसलिए मेरा मन तुम पर आकृष्ट होने लगा है । अतः तुम मेरे इस प्रणय को स्वीकार करो ।

सत्यवती ने कहा – हे मुनि, मेरे शरीर से मछली की जो दुर्गन्ध आती है उसे आप अपने आशीर्वाद से दूर कर दीजिये ।

पाराशर जी ने तुरत उसके शरीर से आने वाले दुर्गन्ध की जगह सुगन्धित कर दिया अब उसका एक नाम सुगन्धा भी हो गया ।

ऋषि नदी किनारे द्वीप में जाकर कोहरा उत्पन्न कर दिये । उस कन्या ने ऋषि के प्रणय को स्वीकार किया । उसी द्वीप में व्यास जी का जन्म हुआ । जन्म के तुरत बाद व्यास जी ने माता से आशीर्वाद माँगा और कहा – माता जब आपको मेरी आवश्यकता होगी आप मुझे याद कीजिएगा मैं तुरत उपस्थित हो जाऊँगा ।

अतः द्वीप में पैदा होने के कारण व्यास जी 'द्वैपाय्रन व्यास' कहलाते हैं । दिये हुए वचन के अनुसार माता के याद किए जाने पर व्यास जी ने अपने वचन को पूरा किया है ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

बोध-कथा

पराजय का कारण

– डा० रामायण उपाध्याय

घोर संग्राम के बाद दशानन रावण के पुत्र मेघनाथ ने देवराज इन्द्र को बन्दी बना लिया । दारुण अपमान के बाद ब्रह्मा के अनुरोध पर मेघनाथ ने इन्द्र को कारागार से मुक्त किया । इन्द्र अत्यन्त लज्जित थे । उनमें तीखी विरक्ति आ गई थी । उनको शासन में कोई रुचि नंहीं रह गयी थी । देवराज्य में घोर उदासी और अव्यवस्था फैल रही थी । इन्द्र अपने महल से बाहर नहीं निकलते थे ।

पितामह ब्रह्मा ने उनको समझाया-बुझाया । इन्द्र ने कहा – "भगवन् मैं यह नहीं समझ पा रहा हूँ कि मेरी पराजय क्यों हुई ? युद्ध के समय. मेरा अमोघ वज्र कुण्ठित क्यों हो गया था ? मुझे सन्तोष जनक उत्तर चाहिए ।"

पितामह ने कहा – 'देवेन्द्र, तुम देवताओं के राजा हो । आत्मवादिता ही तुम्हारी शक्ति है । आत्मवादी की दृष्टि 'रस-दृष्टि' होती है, सौन्दर्य दृष्टि नहीं । सौन्दर्य दृष्टि से रस-दृष्टि व्यापक होती है । सौन्दर्य दृष्टि मानसिक होते हुए भी दैहिक है । पाँच कोष होते हैं – अन्नमय, प्राणमय, मनोमय, विज्ञानमय और आनन्दमय । सौन्दर्य दृष्टि की पहुँच मनोमय कोष तक होती है जो सूक्ष्म शरीर ही है । शरीर या देह के स्तर में भेद का पोषण होता है। शरीर नानात्व की सीमा में है । मनोमय कोष तक ही पहुँच रखने वाला सौन्दर्य – दृष्टि दैहिक होने के कारण सीमित होती है। देह अनेक हैं – आत्मा एक है, अखण्ड है और व्यापक है । देह और मन आदि के सार से ऊपर उठने पर आत्मा के स्तर पर 'रस' की दृष्टि उत्पन्न होती है । रस-दृष्टि आत्मा की दृष्टि होने के कारण व्यापक होती है । स्व, पर और नानात्व का भेद आत्मा के स्तर पर ही मिटता है और इस आत्मा के 'स्तर पर' ही रस-दृष्टि का उदय होता है ।

अतः रस-दृष्टि निश्चय ही सौन्दर्य-दृष्टि से व्यापक होती है । तुम्हारे

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

भीतर रस-दृष्टि का लोप हो चला था। तुम सौन्दर्य दृष्टि के स्तर पर स्खलित हो पड़े थे। देवराज होकर भी देह राज्य में तुम्हारा पतन हो गया था। 'व्यापक' स्तर से 'सीमित' स्तर में तुम्हारी च्युति ही तुम्हारे पतन का और पराजय का कारण है।

इन्द्र ने कहा - 'प्रभो, और स्पष्ट कीजिए।'

पितामह ने कहा - बहुत पुरानी बात है। स्मरण करो। मेरे भीतर रस-दृष्टि का उद्रेक हुआ। मैंने एक अद्भुत सुन्दरी नारी की रचना की। उसकी रूप-राशि को देखकर तुम्हारी रसदृष्टि खो गई और तुममें सौन्दर्य दृष्टि का उदय हो गया। तुमने उसे अपना बनाना चाहा। तुम्हारे भीतर मन का नाटक चलने लगा। मुझसे तुमने कुछ नहीं कहा किन्तु मैं तुम्हारी मन की दीनता समझ रहा था। उस नारी को मैंने मानव-रत्न और रस-दृष्टि सम्पन्न 'गौतम' को सौंप दिया। एक वर्ष तक वह उनके आश्रम में रही। माँगने पर उन्होंने उसे मुझे पुनः लौटा दिया। यह उनकी रस-दृष्टि की परीक्षा थी। वे उत्तीर्ण हुए थे। मैंने उस नारी रत्न को उन्हें पत्नी के रूप में भेंटकर दी थी। तुम इर्ष्या से जल उठे थे। तुम्हारे भीतर अनेक छल-प्रपंचों की सृष्टि हुई। तुमने छल से उस नारी को दूषित करने की चेष्टा की थी। 'हल्य' कहते हैं कुरूपता को। 'हल्या' कुरूपा को कहेंगे। वह महासुन्दरी थी इसीलिए 'हल्या' न होने के कारण उसका नाम 'अहल्या' था। गौतम की रस-दृष्टि के सामने देवराज तुम्हारी सौन्दर्य-दृष्टि व्यर्थ हुई। तुमलोगों ने अनेक अभिशाप भोगे। तुम्हारे पराजय का कारण भी एकमात्र यही दुर्घटना है।

इन्द्र सुनकर सन्न रह गये।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

धैर्य एवं विश्वास

– श्री विजय नाथ पाण्डेय, वाराणसी

प्रभु दर्शन या देव दर्शन हो सकता है यदि विश्वास और धैर्य हो । इस संबंध में एक कथा प्रस्तुत है ।

समर्थ गुरु रामदास बहुत बड़े हनुमान भक्त थे । उन्होंने बहुत जगहों पर हनुमान जी के मंदिर बनवाये । उनके भक्तों की संख्या भी बहुत थी । शिवा जी के भी वे गुरु थे । एक दिन उनके भक्तों ने उनसे आग्रह किया कि उन्हें भी हनुमान जी के दर्शन करावें । गुरु रामदास जी ने कहा–ठीक है, पहले हम श्री हनुमान जी से पूछ लूँ कि आप लोगों को वे दर्शन देगें कि नहीं । कुछ दिनों बाद उन्होंने कहा अगले मंगलवार को वे दर्शन देंगे । भक्त लोग बड़े खुश हुए । उन्होंने एक बड़े मैदान में शामियाना लगाया । कालीन वगैरह विछा दी गई । तरह–तरह के ढोल, मजीरे, मृदंग, हारमोनियम आदि बाजों के साथ सुबह से कीर्त्तन, भजन आदि होने लगे । गुरु रामदास की जय भी बीच बीच में होता था । गुरुजी थोड़ी देर मंच पर रहे फिर उठकर ताली बजाते हुए बीच में एक किनारे से दूसरे किनारे तक नाचते हुए जाते और आते थे । अपने में मस्त कभी आँखें खुलती कभी बन्द होती । सुबह से शाम हो गई रात होने लगी अब भक्त जन धीरे–धीरे जाने लगे । सब बाजे हटाये गये । गुरु रामदास अपनी धुन में उसी तरह नाचते हुए चहल कदमी करते रहे । दरी, कालीन सब कुछ हट गये, उन्हें कुछ भी पता नहीं । यहाँ तक कि वे जब एक तरफ जाते तो दूसरे तरफ की दरी हटा ली जाती और दूसरी तरफ जाते तो पहले तरफ की दरी हटा ली जाती । सभी भक्त चले गये पर रामदास जी को कुछ पता नहीं । लगभग 12 बजे रात में हनुमान जी आये और रामदास जी को रोककर पूछा क़ि किसे दर्शन देना है । गुरु ने देखा वहाँ तो कोई नहीं है । विश्वास की कमी ने उन भक्तों को दर्शन से वंचित रखा ।

उपर्युक्त घटना जब लिख रहा था तो ध्यान आया हमारे गुरु भाई भाट

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2
पार इंटर कॉलेज के प्रधानाचार्य श्री रामनयन मिश्र जी संगम पर गुरुदेव जी का जो दृश्य देखा था वह तो यह समझने के लिए काफी है कि हमारे गुरुदेव जी स्वयं ईश्वर थे उनसे अलग ईश्वर की खोज बेकार है ।

जब वे रामकृष्ण रूप में दक्षिणेश्वर मंदिर में थे तो रानी रासमनी के दामाद श्री मथुरा बाबू ने उन्हें शिव और काली दोनों रूपों में देखा था । वे बरामदे में टहलते हुए एक तरफ जाते तो शिव के रूप में दिखाई पड़ते और जब लौटते तो काली माँ के रूप में दिखते ।

हमारे बीच श्रेष्ठ गुरु भाईयों की कमी नहीं है जिन्हें गुरु कृपा से बहुत कुछ अनुभव प्राप्त हुए हैं और आज भी हो रहे हैं । कुछ गुरु भाईयों को आश्रम माता में श्री गुरुदेव के दर्शन मिलते हैं । मेरा निवेदन है कि पीयूषवल्ली के माध्यम से आप अपने अनुभव प्रकाशित करावें ताकि आगत पीढी प्रभु को जान सके ।

– विजय नाथ पाडेय, वाराणसी ।

Three things for reverence :-

1. Guru
2. Renunciation
3. Discrimination

Three things to renounce :-

1. Evil company
2. Evil desire
3. Evil action

इन तीन का आदर करो :-

1. गुरु
2. त्याग
3. विवेक

इन तीनों को त्यागो :-

1. बुरी संगति
2. बुरी इच्छाएँ
3. बुरे कर्म

– त्रिधारा से

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पूज्य बाबा जी-ईया जी एवं तपः स्थली कौवाहाँ धाम

– विजयेन्द्र प्रसाद

पूज्य बाबा जी – हमलोगों के पूज्य बाबा जी का नाम पं० कृष्णदेव मिश्र था। आप चम्पारण जिले के प्रसिद्ध योगी एवं वैद्यराज ब्रह्मर्षि पं० महावीर दत्त मिश्र के ज्येष्ठ पुत्र थे।

आप एक गृहस्थ साधु, परिश्रमी, नम्र, आचारवान एवं सिद्ध वैष्णव उपासक थे। श्याम वर्ण, तीखा नाक-नक्शा, अंगुठिया बाल, सजी उजली दाढ़ी-मूंछे, मधुर आवाज, ब्राह्मण तेज से मुस्कुराता मुखमण्डल, सुगठित सामान्य कद, बरबस लोग आकर्षित होते थे। स्थानीय लोग वैद्य जी – वैद्य बाबा जी कहकर पुकारते थे, आयुर्वेदिक चिकित्सा उनका पारिवारिक पेशा जो था।

ब्रह्म बेला में कब जगते, पता नहीं। अँधेरे शौचादि से निवृत हो गृहकार्य में लग जाते। एक जोड़ा बैल दरवाजे पर अवश्य रखते और उनकी सेवा में तत्पर रहते। गृहस्थी कार्य देखने के बाद स्नान अपने कुएं पर करते। फिर दैनिक पूजा में बैठ जाते। भगवान शालिग्राम जो एक पीतल के छोटे बक्से में रहते, उनका विधिवत पूजन करते जिसमें कम-से-कम 1 घंटा समय अवश्य लगता। भोग में कोई फल या साबूदाना भिंगोकर मिश्री के ढेले के साथ रखकर भोग लगाते। श्री गुरुदेव जी ने किसी प्रसंग में लिखा है कि "महात्मा आशानन्द जी ने मुझे शक्ति गायत्री बतलायी तथा शक्ति चक्र का स्मरण दिलाया जो दो वस्तुएँ मेरे बाबूजी ने मुझे बतलायी थी"। लोग कहते हैं कि बाबा जी को बहुत मंत्र सिद्ध थे। उन्हें कहते सुना गया – सभी विद्याएं मेरे साथ ही चली जाएँगी क्या ?

तीर्थाटन करने में तत्पर रहते। कोई साथी मिलते ही मिरजई और पगड़ी बाँधकर चल देते। भोजन स्वयं कहीं बगीचा या गाँव से बाहर किसी स्थान में बनाते। बाजार का बना भोजन कभी नहीं करते।

गृहस्थी के कार्य में उनका परिश्रम देखकर साथ के लोगों को भी मेहनत करने का मन करने लगता। जलावन के लिए निज गाछी से लाए वृक्ष

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS MoE Grant-2
ब्रण्ड जब काटने लगते तो उस उम्र में भी कुल्हाड़ी रुकने का नाम नहीं लेती जैसे भगवान परशुराम की कुल्हाड़ी हो । देखने वाले आश्चर्य करते ।

शिक्षा प्रद कथा-कहानियों का सद्भुत संग्रह था । हँसते-हँसाते, साथ रहने वाले सभी परिवारिकों को सदा प्रसन्न रखते थे । कभी किसी पर क्रोध नहीं करते । कभी बेकार नहीं बैठते ।

रात्रि भोजन के बाद सारंगी बजाते थे, बहुत अच्छा बजाते, बजाने में मस्त हो जाते और जो जहाँ सुनता, सुनते ही रह जाता । फिर ध्यान-जप करते सो जाते और पुनः ब्रह्मबेला में जगकर आसन-प्रणायाम-जपादि में लग जाते। आवाज (कंठ) बहुत मीठी थी । भजन में प्रायः "निर्गुण" गाते थे ।

आप ही को सौभाग्य प्राप्त है 1008 श्री रामानन्द शास्त्री 'आनन्द' हमारे पूज्य गुरुदेव जी के पूज्य पिता जी होने का ।

प्रातः स्मरणीया ईया जी - निश्छलता की प्रतिमूर्त्ति, सत्य एवं मधुर भाषिणी, प्रसन्न मुख, रोम-रोम से स्नेह, परोपकार, आशीर्वाद विखेरती, तपः मूर्ति गौरांगी ईया जी का जीवन सती अनुसूया, माता कौशल्या एवं माता यशोदा आदि की दुर्लभ श्रेणी में था ।

प्रायः प्रातः 3 बजे पारिवारिक गाँव की महिलाओं का झुण्ड नारायणी स्नान को निकटवर्ती मलाही तट के लिए निकलता और प्रातः 5 बजते-बजते मंगलगीत गाते लौट आता । व्रत-त्योहार-ग्राम्य कार्यों में पारिवारिक एकता सहित दैनिक घरेलू कार्य ऐसे सम्पन्न होते कि घर स्वर्ग बना रहता ।

ईया जी (श्रीमती पर्णवती देवी) के पूज्य पिताजी मलाही नदी के उस पार गोपालगंज के निकट ग्राम "बोरवन" के प्रसिद्ध तांत्रिक एवं सिद्ध पुरूष थे । तटवर्ती क्षेत्र में उनकी शिष्य परम्परा आज भी विद्यमान है । ईया जी के बड़े भाई श्री गुरुदेव जी के बड़े मामा जी की प्रसिद्धि उनदिनों शिखर पर थी । उनके कतिपय लेख एवं अनुभूतियाँ "मामा जी ने कहा था' पत्र-पत्रिकाओं में छपती रही हैं जिन्हें हम आज भी पीयूष वल्ली में साधकों के हित में प्रकाशित करते हैं ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

फाल्गुण शुक्ल एकादशी, वैक्रमाब्द 1983 में नैनीताल से प्रेषित श्री ऋषभानन्द महाराज के पत्र में दादा गुरुदेव ब्रह्मर्षि पं० महावीर दत्त मिश्र की आँखों देखी तथ्य का वर्णन है– "एक स्वस्थ सरल सदाचारिणी बधु के गर्भस्थापन में आठो वसु, दस दिग्पाल, पंचलोकपाल, विविध देवर्षि, ब्रह्मा, विष्णु, रूद्र तीनों देवता अपना तेज गर्भ में देकर लौट रहे थे। साथ ही हृदय में अनेक चन्द्रमा तथा आँखों में अनेक सूर्य रस और तेज की धारा ढाल रहे थे उक्त बधु की ही।

धन्य हैं हमारे पूज्य सन्त शिरोमणि बाबा जी एवं वात्सल्य मूर्त्ति पूज्या ईया जी जिनकी तपस्या से प्रभु श्री गुरुदेव जी को पुत्र रूप में अवतरित होना पड़ा। गुरुदेव की जन्म स्थली, तपः स्थली "कौवाहाँ" धाम – यह स्थान पूर्वी चम्पारण के प्रसिद्ध शिवधाम तीर्थराज "अरेराज" से 6 किलोमीटर पश्चिम एवं नारायणी तट 'मलाही' से 6 किलोमीटर पूरब दिशा में अवस्थित है।

प्रभु की जन्म स्थली रमणीय, लहलहाती धान्य खेतों–खलिहानों के बीच विशेषतः आम्र, कदली, श्रीफल, नारीयल, जामुन आदि फल वृक्षों से तथा ऊंडहुल, चम्पा, कनईल, हरसिंगार, गेंदा आदि पुष्प वृक्षों एवं तुलसी, सहंजन प्रभृति औषधीय पेड़–पौधों से घिरी एक अनूठी छटा बिखेरती रमणीक रम्य स्थली है। घर के बाउंडरी के भीतर लगभग 4 कठ्ठा जमीन साग–सब्जी के लिए है। श्री गुरुदेव जी शिष्यों सहित गाँव पर आते तो 2–3 टोकरी साग अवश्य तोड़ते–तोड़वाते। पूरा गुरु परिवार साग–सब्जी में विशेष रुचि रखता है। गाँव में घर से सटे सप्तमातृका·दुर्गा का प्राण प्रतिष्ठित मन्दिर है जिसे श्री गुरुदेव जी ने अध्यापन के प्रथम प्राप्त वेतन 1000 रूपये से निज जमीन में बनवाया था। यह सिद्ध पीठ है। यहाँ धूप–हवन–जप–कीर्त्तन से माँ विशेष प्रसन्न रहती हैं। सिद्ध योगीराज ब्रह्मलीन डा० जगदीश प्रसाद सिंह (भूतपूर्व प्रिंसिपल, पड़रौना) के शब्दों में श्री गुरुदेव जी जन्म दिवस अगहन शुक्ल मोक्षदा एकादशी को इस माँ–मन्दिर में सूक्ष्म शरीर से विराजमान रहते हैं।

आगे सटे दक्षिण कौवाहाँ चौक बाजार पर 'माटी का ब्रह्म' स्थान प्रसिद्ध

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2
खण्ड जब काटने लगते तो उस उम्र में भी कुल्हाड़ी रुकने का नाम नहीं लेती जैसे भगवान परशुराम की कुल्हाड़ी हो । देखने वाले आश्चर्य करते ।

शिक्षा प्रद कथा-कहानियों का सद्भुत संग्रह था । हँसते-हँसाते, साथ रहने वाले सभी परिवारिकों को सदा प्रसन्न रखते थे । कभी किसी पर क्रोध नहीं करते । कभी बेकार नहीं बैठते ।

रात्रि भोजन के बाद सारंगी बजाते थे, बहुत अच्छा बजाते, बजाने में मस्त हो जाते और जो जहाँ सुनता, सुनते ही रह जाता । फिर ध्यान-जप करते सो जाते और पुनः ब्रह्मबेला में जगकर आसन-प्रणायाम-जपादि में लग जाते । आवाज (कंठ) बहुत मीठी थी । भजन में प्रायः "निर्गुण" गाते थे ।

आप ही को सौभाग्य प्राप्त है 1008 श्री रामानन्द शास्त्री 'आनन्द' हमारे पूज्य गुरुदेव जी के पूज्य पिता जी होने का ।

प्रातः स्मरणीया ईया जी – निश्छलता की प्रतिमूर्त्ति, सत्य एवं मधुर भाषिणी, प्रसन्न मुख, रोम-रोम से स्नेह, परोपकार, आशीर्वाद विखेरती, तपः मूर्ति गौरांगी ईया जी का जीवन सती अनुसूया, माता कौशल्या एवं माता यशोदा आदि की दुर्लभ श्रेणी में था ।

प्रायः प्रातः 3 बजे पारिवारिक गाँव की महिलाओं का झुण्ड नारायणी स्नान को निकटवर्ती मलाही तट के लिए निकलता और प्रातः 5 बजते-बजते मंगलगीत गाते लौट आता । व्रत-त्योहार-ग्राम्य कार्यों में पारिवारिक एकता सहित दैनिक घरेलू कार्य ऐसे सम्पन्न होते कि घर स्वर्ग बना रहता ।

ईया जी (श्रीमती पर्णवती देवी) के पूज्य पिताजी मलाही नदी के उस पार गोपालगंज के निकट ग्राम "बोरवन" के प्रसिद्ध तांत्रिक एवं सिद्ध पुरूष थे । तटवर्ती क्षेत्र में उनकी शिष्य परम्परा आज भी विद्यमान है । ईया जी के बड़े भाई श्री गुरुदेव जी के बड़े मामा जी की प्रसिद्धि उनदिनों शिखर पर थी । उनके कतिपय लेख एवं अनुभूतियाँ "मामा जी ने कहा था' पत्र-पत्रिकाओं में छपती रही हैं जिन्हें हम आज भी पीयूष वल्ली में साधकों के हित में प्रकाशित करते हैं ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

फाल्गुण शुक्ल एकादशी, वैक्रमाब्द 1983 में नैनीताल से प्रेषित श्री ऋषभानन्द महाराज के पत्र में दादा गुरुदेव ब्रह्मर्षि पं० महावीर दत्त मिश्र की आँखों देखी तथ्य का वर्णन है- "एक स्वस्थ सरल सदाचारिणी बधु के गर्भस्थापन में आठो वसु, दस दिग्पाल, पंचलोकपाल, विविध देवर्षि, ब्रह्मा, विष्णु, रूद्र तीनों देवता अपना तेज गर्भ में देकर लौट रहे थे। साथ ही हृदय में अनेक चन्द्रमा तथा आँखों में अनेक सूर्य रस और तेज की धारा ढाल रहे थे उक्त बधु की ही।

धन्य हैं हमारे पूज्य सन्त शिरोमणि बाबा जी एवं वात्सल्य मूर्त्ति पूज्या ईया जी जिनकी तपस्या से प्रभु श्री गुरुदेव जी को पुत्र रूप में अवतरित होना पड़ा। गुरुदेव की जन्म स्थली, तपः स्थली "कौवाहाँ" धाम - यह स्थान पूर्वी चम्पारण के प्रसिद्ध शिवधाम तीर्थराज "अरेराज" से 6 किलोमीटर पश्चिम एवं नारायणी तट 'मलाही' से 6 किलोमीटर पूरब दिशा में अवस्थित है।

प्रभु की जन्म स्थली रमणीय, लहलहाती धान्य खेतों-खलिहानों के बीच विशेषतः आम्र, कदली, श्रीफल, नारीयल, जामुन आदि फल वृक्षों से तथा ऊंडहुल, चम्पा, कनईल, हरसिंगार, गेंदा आदि पुष्प वृक्षों एवं तुलसी, सहिंजन प्रभृति औषधीय पेड़-पौधों से घिरी एक अनूठी छटा बिखेरती रमणीक पुण्य स्थली है। घर के बाउंडरी के भीतर लगभग 4 कठ्ठा जमीन साग-सब्जी के लिए है। श्री गुरुदेव जी शिष्यों सहित गाँव पर आते तो 2-3 टोकरी साग अवश्य तोड़ते-तोड़वाते। पूरा गुरु परिवार साग-सब्जी में विशेष रुचि रखता है। गाँव में घर से सटे सप्तमातृका-दुर्गा का प्राण प्रतिष्ठित मन्दिर है जिसे श्री गुरुदेव जी ने अध्यापन के प्रथम प्राप्त वेतन 1000 रूपये से निज जमीन में बनवाया था। यह सिद्ध पीठ है। यहाँ धूप-हवन-जप-कीर्त्तन से माँ विशेष प्रसन्न रहती हैं। सिद्ध योगीराज ब्रह्मलीन डा० जगदीश प्रसाद सिंह (भूतपूर्व प्रिंसिपल, पड़रौना) के शब्दों में श्री गुरुदेव जी जन्म दिवस अगहन शुक्ल मोक्षदा एकादशी को इस माँ-मन्दिर में सूक्ष्म शरीर से विराजमान रहते हैं।

आगे सटे दक्षिण कौवाहाँ चौक बाजार पर 'माटी का ब्रह्म' स्थान प्रसिद्ध

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant 2

है । सरकार जब भी आते थे इस माटी के ब्रह्म स्थान पर धूप-दीप आदि से पूजा करते, फिर माई मन्दिर में विधिवत पूजन करने के बाद ही अपने घर जाते थे । लौटने के समय भी माई-स्थान और ब्रह्म-स्थान को प्रणाम-पूजन के बाद ही बाहर के लिए प्रस्थान करते । श्री गुरुदेव जी के गृह स्थान से 1/2 किलोमीटर उत्तर "मानुषदेव बाबा" का देव स्थान है । घर के बगल पश्चिम से चौड़ा नारा बहता है जो गंडक से आने वाले नहर में मिलता है । यहाँ प्राय: पानी लगा रहता है । छठ पर्व पर गाँव के लोग यहीं किनारे कई स्थानों पर श्री शोभिता बनाकर धूमधाम से पूजा करते हैं । श्री गुरुदेव जी छठ पर्व पर माता जी एवं बबुनी लोगों के साथ घर पहुँचते थे जहाँ ईया जी भी छठ व्रत करती थीं ।

सरकार के गृह-स्थान से 6 किलोमीटर दक्षिण "सखवाँ" श्मशान घाट है । श्री गुरुदेव जी के निवास स्थान पर पुराने समय से ही दूर-दूर से साधक गण बाबा जी (श्री गुरुदेव जी के गुरुदेव पं० महावीर दत्त मिश्र) से साधना-उपासना में आध्यात्मिक सहयोग हेतु आते, महीनों रहते और लाभ प्राप्त करके जाते थे ।

इस प्रकार यह स्थान भी सिद्ध पीठ है ।

बेतिया आश्रम के गुरु भाई धन्यवाद के पात्र हैं जिनके समय, श्रम एवं अर्थ दान से श्री गुरुदेव जी के घर वाले जमीन पर एक भवन का निर्माण कार्य चल रहा है । कालान्तर में यहाँ श्री गुरुदेव जी एवं उनके माता-पिता की प्रस्तर मूर्तियाँ स्थापित करने का संकल्प है ।

यह स्थान श्री गुरुदेव प्रभु की कृपा से सतत् मनोरम एवं पूजनोपयोगी बना रहता है । श्रद्धालु भक्तगण यहाँ आते, पूजा करते और अपने साथ गुरुजन्म स्थान की मिट्टी ले जाते हैं । कहते हैं निज गुरु के जन्मस्थान पूजन एवं सश्रद्ध एक माह से अधिक वास से मोक्ष तक दुर्लभ नहीं ।

"अहा ! जंन्म स्थली धन्या, स्वर्गादपि गरीयसि ।
बिना प्रभु प्रसादेन क्षणमेकं न तिष्ठति ॥"

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

"गुरु सम कौन कृपालु महाना"

- जनार्दन प्रसाद, बनारसी

श्री गुरुदेव जी के बारे में कुछ बतलाना सूर्य को दीपक दिखलाने जैसा है । असाधारण प्रतिभा के परमात्म रूप व्यक्तित्व हमलोगों जैसे साधारण आदमी के साथ मित्र, माता, पिता, भाई या उससे भी अधिक नजदीकी बनकर हँसना, बोलना, समझाना, इसे गुरु कृपा के सिवा और क्या कह सकेंगे ? उनका बच्चों के साथ बच्चों जैसा वर्ताव और विद्वानों के समक्ष विद्वता पूर्ण विवेचन अपने आप में एक आश्चर्य था । जब हमारे सामने होते, वे कदाचित हमारे मानसिक स्तर पर उतरकर हँसते-बोलते और हम समझ ही नहीं पाते कि ये वही सरकार हैं जिनके सामने कोई बड़ा-से-बड़ा विद्वान शास्त्रार्थ में ठहर नहीं पाता ।

शास्त्रार्थ में भी जैसे वे प्रतिद्वन्दी के स्तर पर उतरते, फिर उसे बोलते-बोलवाते धीरे-धीरे ऊपर उठते उसकी बुद्धि की परख करते हुए क्रमशः उस ऊँचाई पर पहुँचते जहाँ से उसे परास्त होने में भी गर्व का अनुभव होता ।

एकबार दरभंगा राज्य में किसी यज्ञ का अनुष्ठान था । श्री गुरुदेव जी आमंत्रित थे । हवन के समय अग्नि प्रज्वलित करने के लिए दोनों हाथों में शमी की लकड़ी लेकर मंत्र पढ़कर परस्पर घर्षण कर हवन कुण्ड में डालना होता है । श्री गुरुदेव जी ने मंत्र पढ़कर हवन कुण्ड में फूंक दिया, अग्नि प्रज्वलित हो गयी । यह बात गुरुदेव जी ने अपने गुरुदेव जी से कहा तो उन्होंने कहा कि तुमने ठीक किया ।

शास्त्रार्थ की बारी आयी । जिस पंडित से शास्त्रार्थ हो रहा था, वह सिद्ध पंडित थे । श्री गुरुदेव जी जब बोलते-बोलते थक गये तो उन्होंने अपने कुल देवता भगवान सूर्य से निवेदन किया कि आगे आप बोलें, मैं थक गया हूँ । भगवान सूर्य बोलने लगे तो उस पंडित ने कहा - यह सूर्य मेरे सामने

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2
क्या बोलेगा, यह तो क्षत्रिय है । तब श्री गुरुदेव जी ने महावीर जी का स्मरण किया और कहा कि आप वैदिक देवता नहीं हैं, अतः पंडित नहीं समझ सकेगा कि कौन बोल रहा है और आप ज्ञानिनामग्रण्य हैं ही । अब महाबीर जी बोलने लगे और पंडित परास्त हो गये । दरबार में श्री गुरुदेव जी का बड़ा सम्मान हुआ ।

सरकार के गाँव के रास्ते में ग्रम लौरिया में एक अशोक स्तम्भ है जिसे सरकार महाशिवलिंग कहते हैं । सरकार ने कहा था – काली माई को चढ़ायी गयी पूड़ी में जो दिव्य स्वाद और सुगंध होता है, वह अन्य पूड़ियों में सम्भव नहीं । उसी प्रकार सत्यनारायण भगवान् को चढ़ाए गये चूरण और हलवे में जो दिव्य स्वाद और सुगंध होता है, वह अन्य चूरण और हलवे में नहीं ।

सरकार ने बतलाया था – "माता-पिता कैसे भी हों, भ्रष्ट हों, कुकर्मी हों, पुत्र कितना भी भक्त और चरित्रवान हो, उसे उन्हें (माता-पिता को) प्रणाम करना चाहिए । उसे प्रणाम का सुफल अवश्य मिलेगा । माता पिता से विकिरण होने वाली शक्ति हमें हमारे सचादरण से मिल जाती है । माता-पिता, नाता रिस्ता नहीं, एक पीठ है जैसे शिव-पार्वती, लक्ष्मी-नारायण । अगर दूध का अर्घ्य देना है तो वह दूध "सोरही" का है या "हरही" का इससे आपका कोई प्रयोजन नहीं । अर्घ्य देने पर आप फल के अधिकारी हो जाएंगे । कुछ लोगों को प्रणाम करने पर वे 'राम-राम' या 'शिव-शिव' या 'हरे कृष्ण' कह देते हैं । अर्थात् प्रणाम करने पर वह व्यक्ति अपने उपास्य देव के शरण में चला गया । आपका प्रणाम स्वयं नहीं लिया प्रत्युत वह प्रणाम उस देवता को मिला जिसका उसने नाम लिया । उसे फल-भी उसी देवता को प्रणाम का मिलेगा । जो माता-पिता अपने को अयोग्य समझते हैं उन्हें यही करना चाहिए या अन्य साधारण लोगों को भी ।

रेलवे औद्योगिक प्रतिष्ठान (डी.एल.डब्लू) में मेरे साथ कार्यरत "शिवरत्न जी" मेरे साथ सिवान आश्रम आया-जाया करते थे । वे अस्वस्थ थे । मरणासन्न अवस्था में उन्हें डी.एल.डब्लू अस्पताल से बी.एच.यू. अस्पताल रेफर कर दिया गया । वहाँ जाने पर वे गिरकर बेहोश हो गये । इधर गुरुदेव

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0 In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2
जी बनारस कोलिए चल चुके थे । बहुत देर बाद शिवरत्न जी को होश आया तो उन्होंने मुझें बताया था कि दो व्यक्ति मुझे एक तक्थे पर लिटाकर आकाश मार्ग से ले जा रहे थे । उस समय शिवरत्न जी चिल्ला रहे थे तुमलोग मुझे छोड़ दो, तुमलोग मेरा कुछ नहीं बिगाड़ सकते और जोर-जोर से गुरुदेव-गुरुदेव का उच्चारण कर रहे थे । थोड़ी देर बाद वे दोनों मुझे मेरे शरीर (शव) के पास छोड़कर चले गये । वे जीवित हो गये । बाद वे अपने साईकिल से क्वाटर आ गये ।

गुरुदेव जी वाराणसी आकर होटल में ठहर गये । दिन में दर्शन-पूजन कर रात्रि में मेरे क्वाटर आए । मैं उस समय उत्तर प्रदेश सांस्कृतिक कार्यक्रम देखने रंगशाला गया था । गुरुदेव जी ने शिवरत्न जी को बुलवाया । शिवरत्न जी गुरुदेव जी को देख चकित हो गये । पूछा, आप अनायास कैसे आए ? गुरुदेव जी ने कहा - आया हूँ सबके लिए पर एक के लिए विशेष । आओ, मेरे साथ चलो । शिवरत्न जी गुरुदेव जी के साथ रिक्शे पर बैठने में हिचकिचा रहे थे । बोले-आपकी बराबरी में कैसे बैठूँ ? गुरुदेव जी ने कहा - मेरे साथ रहोगे तो मरोगे नहीं । शिवरत्न जी विह्वल होकर रोने लगे । थोड़ी दूर जाने पर सरकार ने रिक्शा रुकवा दिया और शिवरत्न जी से कहा - जनार्दना को बुला लाओ । शिवरत्न जी ने मुझे बताया कि बाहर रोड पर सरकार आपको बुला रहे हैं । मैंने साइकल उठायी और तत्काल बाहर आकर सरकार को प्रणाम किया । मैंने सफाई पेश किया कि मैं रंगारंग कार्यक्रम देखना पसन्द नहीं करता, सिनेमा भी नहीं, किन्तु उत्तर प्रदेश सरकार का कार्यक्रम शिक्षाप्रद होगा यह जानकर आ गया था । सरकार ने कहा- पायल की आवाज तो आ रही थी । मैंने कहा - कार्यक्रम बदलता रहता है, अभी नृत्य हो रहा है । होटल पहुँचकर जहाँ सरकार रुके थे, मैंने शिवरत्नजी से पूछा, दस हजार की भीड़ में आपने मुझे कैसे पा लिया ? शिवरत्न जी ने कहा - सरकार का फोर्स था मैं जैसे अन्दर गया, आप तुरत नजर आ गये ।

होटल में गुरुदेव जी के साथ जो शिष्य आए थे, उनको अलग बुलाकर शिवरत्न जी ने पूछा - कल्ह, रात्रि के साढ़े आठ बजे गुरुदेव जी कहाँ थे ?

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding: IKS-MoE Grant-2

शिष्य ने बताया – उस समय गाड़ी सालेमपुर पार कर चुकी थी, गुरुदेव जी व्याकुलता से बोगी में टहल रहे थे और माला लेकर जप कर रहे थे ।

सच है, शिष्य सोता है पर गुरु नहीं सोता । गुरुदेव जी का सोना विलक्षण ही था । वे शवासन में लेटे रहते सोये से दीखते थे ।

कल्याण करना ही उनका काम था । किसी को मार्केश रहता उसे साथ रखकर सेवा कराते और उसका कल्याण करते । मेरे भगिना शंकर (मीरगंज) के साथ भी ऐसा ही हुआ था । ऐसे अनेक उदारण हैं । मेरा माँ की आयु बढ़ाने के लिए बिना कुछ कहे उन्होंने कुछ ऐसा कर दिया था कि उसकी श्वास वायु की गति ऐसी हो गयी थी कि अंश कुम्भक हो जाता था । यह माँ की जप का प्रभाव था या हमलोगों पर गुरुकृपा । इस विषय में मुझे बहुत बाद में माँ के साथ सिवान आश्रम से बनारस लौटने के क्रम में माँ से ही पता चला था ।

सरकार कहते थे – कर्म करते रहो, जप करते रहो, मेरा ध्यान करते रहो । मुझसे उन्होंने कहा था –

कर से कर्म करहुँ विधि नाना ।

(हृदय पर हाथ रखकर) मन राखहुँ जहाँ कृपानिधाना ।।

– क्रमशः ।

भगवान श्री कृष्ण ने अर्जुन से कहा था –

यो मां पश्यति सर्वत्र, सर्वं च मयि मश्यति ।
तस्याहं न प्रणश्यामि, स च मे न प्रणश्यति ।।

He who sees Me (the Universal self) present in all beings and sees all beings existing in Me, I am never out of sight of him, nor is he ever out of sight of Me.

– गुरुदेव जी की डायरी से ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ॐ श्री सद्गुरुदेवाय नमः

रे प्राणी, हरि गुरु को बिसरायो ।
चौरासी के चक्कर काट्यो, नरक यातना पायो ॥ 1 ॥
जँह जँह जन्मयों त्रिबिध ईषना, सुत, वित, लोक सजायो ।
विषय कुपथ्य पान करि करि नित, मानस रोग बढ़ायो ॥ 2 ॥
राति दिवस नित कठिन श्रम करि, माया महल बनायो ।
विविध जतन करि छल प्रपंच रचि, जग संपदा कमायो ॥ 3 ॥
सुत, वित, नारि, भवन सब छूटिहैं, अंत समय जब आई ।
विछुरत प्रान दुसह दुःख होइहैं, संग कछु नहि जाई ॥ 4 ॥
मानव तन प्रभु दीन्हिं कृपा करि, ले सठ सफल बनाई ।
छाड़ि कपट जंजाल बेगि करि, ले सद्गुरु शरणाई ॥ 5 ॥
निर्गुण ब्रह्म सगुण सद्गुरु हैं, शरणागत भयहारी ।
एकनिष्ठ होइ गुरु सुमिरन कर, जग कै आस बिसारी ॥ 6 ॥
दंड (छड़ी) पाणि धरि गुरु बसिहैं उर, माया निकट न आयो ।
अस श्रद्धा विश्वास प्रबल करि, गुरु पद प्रीति लगायो ॥ 7 ॥

श्री सद्गुरुदेव भगवान की जय

श्री गुरु प्रेरणा से उपजी "प्रथम शब्दों की पुष्प माला"
श्री सद्गुरुदेव भगवान के चरणों में सादर समर्पित

श्री गुरु चरणानुरागी तुच्छ सेवक
भारतेन्दु मणि त्रिपाठी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

धर्म और शास्त्र

किसी गाँव में एक बहुत बड़ा मेला लगा हुआ था । हजारों लोग मेले में इकट्ठे हुए । पास में एक कुँआ था जिसके उपर पाट नहीं था । मेले के भीड़ में से एक आदमी उस कुँए में गिर गया । वह कुएँ के भीतर से चिल्ला रहा था मुझे बचाओ, मैं मरा जा रहा हूँ । मेले में इतना शोरगुल था कि उसकी चिल्लाने की आवाज कोई सुन नहीं रहा था । एक बौद्ध भिक्षु पानी-पीने के लिए कुँए पर रुका । नीचे देखा तो वह आदमी चिल्ला रहा था । उसने भिक्षु को देखा तो हाथ जोड़ा और कहा – मैं तैरना नहीं जानता, मैं मरा जा रहा हूँ मुझे जल्दी बाहर निकालें । मेरे हाथ काँप रहे हैं ।

उस बौद्ध भिक्षु ने कहा- मेरे दोस्त तुझे पता नहीं; भगवान बुद्ध ने क्या कहा है ? भगवान बुद्ध ने कहा है कि जीवन व्यर्थ, असार और दु:ख है । जीवन से बचकर भी क्या करोगे, दु:ख से निकलकर कहाँ जाओगे । जीवन तो खुद एक बड़ा कुआं है इसलिए जीवन की कामना क्यों करते हो ? मोक्ष की कामना करो और जीने की कामना छोड़ो ।

वह आदमी चिल्लाने लगा । यह समय उपदेश का नहीं है । मुझे बाहर निकालो फिर मैं आपकी बातें सुनूगा । उस भिक्षु ने कहा तुम समझे नहीं । भगवान ने शास्त्रों में भी यही कहा है कि आदमी को जो भी भोगना पड़ता है अपने पिछले जन्मों के कारण । तुमने कभी किसी को कुँए में गिराया होगा इसलिए गिरे हो । जो जैसा करता है वैसा भोगता है यही तो शास्त्र में लिखा है अब पूरे कर्म को भोग लो तो कर्म से मुक्त हो जाओगे । मैं तुम्हें निकालकर झंझट में क्यों पड़ूं क्योंकि शास्त्रों में कहा गया है कि जो भी तुम करते हो वह सोच-विचार कर करो अन्यथा तुम भी कहीं पाप के भागीदार न हो जाओ । मैं तुम्हें कुएँ से निकाल दूँ और कल तुम कहीं चोरी कर लो, किसी की हत्या कर दो, तो मैं भी पाप का भागीदार हो जाऊँगा । अत: क्षमा करो, मैं मोक्ष की कोशिश में लगा हुआ हूँ मैं किसी झंझट में नहीं पड़ना चाहता, भगवान तुम्हारी रक्षा करें । यह कहते हुए वह बौद्ध भिक्षु आगे बढ़ गया । वह आदमी तो हैरान हो गया । उस भिक्षु ने जो भी कहा था सभी बातें शास्त्रों में लिखी हुई हैं इसमें एक शब्द भी उसका अपना नहीं था ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

शास्त्र की बातें उसे कंठस्थ थी ।

बौद्ध भिक्षु के जाने के बाद कन्फ्यूशियस को माननेवाला एक दूसरा फकीर कुएँ पर आ गया । उसने भी नीचे झांककर देखा । वह आदमी चिल्लाया, मुझे बचाओ । अब मेरे बचने की ज्यादा संभावना नहीं है । मुझे जल्दी निकाला नहीं गया तो मैं मर जाऊँगा । उस फकीर ने कहा कन्फ्सूशियस ने ठीक ही कहा है कि हर कुएँ के उपर दिवाल और पाट जरूर होनी चाहिए । जिस राज्य में कुएँ के उपर दिवाल और पाट नहीं होता वह राज्य अन्यायी है । तुम घबराओ मत, मैं आन्दोलन चलाऊँगा और हर कुएँ पर पाट बंधवा दूँगा । तुम बिल्कुल बेफिक्र रहो ।

उस आदमी ने कहा–क्या बातें कर रहे हैं बेफिक्र रहने की ? मैं तो कुएँ में गिर ही चुका हूँ और कुछ क्षण में मेरी मृत्यु हो जाएगी । उसके बाद पाटों के बनने से क्या होगा कृपा कर मुझे कुएँ से बाहर निकाल लो । उसने कहा इतनी फुर्सत कहां कि एक-एक आदमी की फिक्र की जाए । मैं पूरे समाज का ही परिवर्तन चाहता हूँ । तुम शहीद हो जाओ, तुम्हारा नाम स्वर्णाक्षरों में लिखा जाएगा । तुम्हारे मजार पर मेले लगेंगे । लोग हजारों साल तक याद रखेंगे कि एक आदमी ने कुएँ में गिरकर सब कुओं के पाट बंधवा दिये थे । मैं अभी जाता हूँ आंदोलन करता हूँ, तू बेफिक्र रहो ।

वह आदमी चिल्लाता रहा । भिक्षु चला गया और भीड़ मे मंच पर खड़ा हा गया और लोगों को समझाने लगा कि देखो जब तक कन्फ्यूशियस की बात नहीं सुनी जाएगी तब तक दुनिया में इसी तरह के कष्ट होते रहेंगे। एक आदमी कुएँ में पड़ा है वह भी इस बात को सिद्ध करने का प्रमाण है। वह आदमी वही कह रहा है जो दुनिया के सब समाज सुधारक कहते हैं लेकिन वह आदमी मरा जा रहा है, उसके प्राण निकले जा रहे हैं । आज उसे पहली बार पता चला कि अच्छी बातें करने वाले लोग क्या कर सकते हैं ।

तभी एक पादरी भी उस कुएँ पर आ गया और उसने भी कुएँ में झांककर देखा । आदमी बोल भी नहीं पाया था कि उसने कहा–मत घबड़ा और उसने अपने झोले से रस्सी निकाली । वह झोले में रस्सी हमेशा साथ ही रखता था क्योंकि कब कोई कुएँ में गिर पड़े और उसे बचाने का मौका मिल जाए । उसने रस्सी नीचे फेंकी और उस आमदी को बाहर निकाला ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2
उस आदमी ने कहा–धन्य हैं आप ! आपसे पहले भी दो भिक्षु आये थे उन्होंने मुझे उपदेश दिया । आपकी बड़ी कृपा है कि आपने मुझे बचाया ।

पादरी ने कहा, क्षमा करो, तुमने गलत समझा । मैंने तुझे बचाया नहीं । जीसस क्राइस्ट ने कहा है कि जो सेवा करता है वह भगवान का प्यारा हो जाता है अतः हम सेवा करते हैं ताकि भगवान के प्यारे हो जायँ । हमें तुमसे क्या लेना-देना है । हम स्वर्ग की खोज कर रहे हैं । हम तो खुश होते हैं जब कोई कुएँ में गिरा दिखाई पड़ता है क्योंकि हमें सेवा करने का मौका मिल जाता है । तुम बड़े अच्छे हो तुमने हमारे स्वर्ग की एक सीढ़ी बना दी । अपने बच्चों को भी समझाना कि कुएँ में गिरते रहें और हम उन्हें बचाते रहें । सेवा का जो मौका देते हैं वे स्वर्ग की सीढ़ियां बनते हैं । उनके कंधों पर कुछ लोग पैर रखकर स्वर्ग चले जाते हैं । बीमारों की सेवा करके, गरीबों की सेवा करके कुछ लोग स्वर्ग की यात्रा तय करते हैं ।

इन तीनों आदमियों पर हँसी आती है । इन तीनों के सामने जो घटित हो रहा है वह उन्हें उतना मूल्यवान नहीं है जितनी वह किताब जिसे उन्होंने पढ़ी है । वह मरता हुआ आदमी, उसकी टूटी हुई श्वास, उन्हें दिखाई नहीं पड़ती उन्हें अपनी किताब दिखाई पड़ती है ।

हम सबको भी यही होता है । एक आदमी को हम सड़क पर भीख मांगते देखते हैं, भूखा देखते हैं और कहते हैं कि यह तो अपने-अपने कर्मों का फल है । शास्त्र बीच में आकर खड़ा हो जाता है और हम गरीब को भुला देते हैं । हम जीवन को पीछे देखते हैं और सिद्धान्त को पहले । यह दृष्टि गलत है । जीवन प्रथम है और जो जीवन को देखने में समर्थ हो जाता है उसके लिए सिद्धान्त का कोई सवाल नहीं रहता । शास्त्र की गवाही नहीं रह जाती अपने अनुभव की गवाही खड़ी हो जाती है । तब वह खुद साक्षी हो जाता है किसी सत्य का । प्रेम के संबंध में सारी किताबें पढ़ लेना एक बात है और प्रेम के संबंध से गुजर जाना बिलकुल दूसरी बात है । परमात्मा के संबंध में गीता, रामायण, उपनिषद कंठस्थ कर लेना एक बात है और परमात्मा में से गुजर जाना, उसकी अनुभूति प्राप्त करना दूसरी बात है ।

विनोद कुमार झा,
नगर आयुक्त, दरभंगा

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कर्म का महत्व

– श्री शशि शेखर शुक्ल

संसार का प्रत्येक अणु-परमाणु गतिमान रहता हुआ क्रियाशील जीवन व्यतीत करने की प्रेरणा देता है। कर्म करने का अपना पूर्ण अधिकार है, क्योंकि केवल मनुष्य को ही मन, बुद्धि इत्यादि इंद्रियों पर आधिपत्य मिला हुआ है, फिर क्यों न पुरुषार्थी बनकर उन सबका उपयोग करें। जैसे वायु, सूर्य, जल निष्काम भाव से सृष्टि चक्र चला रहे हैं। फल-फूल, औषधि, वनस्पति आदि खाने की वस्तुओं में अमृत भरने वाले चंद्रदेव पृथ्वी की निरंतर परिक्रमा करते हैं। साथ ही, सर्वहित साधन का निराला ढंग मनुष्य के समक्ष प्रस्तुत करते हैं। फल निरपेक्ष रूपी निष्कामना पूर्ण कर्म अनुपम आनंद देने वाला होता है। ऐसे ही कर्मफल की किंचित मात्र भी आकांक्षा न रखने वाले कर्मयोगी की सत्य कर्म निष्ठा सूर्यवत, समाज के कल्याण कामना से ओत-प्रोत रहती है और उसकी मनोवृत्ति व्यापक उदार व सम रहती है। कर्म का सीधा संबंध धर्माचरण की स्थूल क्रिया से है और मन की समस्त वासनाओं से निकलकर चित्त को अपने कर्मों में लगाकर निरासक्त भाव से जो कुछ किया जाता है वह विकर्म है।

विकर्म से निष्कामता की एक ज्योति जल उठती है। इसके प्रकाश में किया गया प्रत्येक शोभन कर्म, अकर्म (कर्म करना किन्तु फल की चिन्ता नहीं होना) का रूप धारण कर लेता है। निष्कामता एवं निष्पापता हृदय की कठोरता को समाप्त कर उसे लचीला बनाते है। ऐसा दृश्य ही प्रेम-मंदिर बन जाता है। प्रभु के पावन प्रेम का सुपात्र बनकर ऐसा मानव महापुरुष बन जाता है। पूर्व जन्म के कर्मानुसार ही प्रत्येक मनुष्य के लिए भोग का निश्चय ईश्वरीय नियमानुसार होता है। प्रभु जहाँ कर्मफल दिया करते हैं वहीं दयापूर्वक उस कर्मफल को सुधार का साधन भी बना देते हैं। साधु पुरुष अपने मन-इन्द्रियों को भोगों से सर्वथा सुरक्षित रखता है और समय पड़ने पर स्वचर की संकुचित सीमा से बाहर निकल भयंकर परिस्थिति का सामना संयम और साहस से करता है। वह केवल कर्तव्य पालन करना जानता है। फल क्या होगा, इसे प्रभु पर छोड़ देता है। योग-दर्शन अर्थात् तप, स्वाध्याय और ईश्वरार्पण बुद्धि से कर्तव्य कर्म का यथावत पालन करना कर्मयोग है। कर्म का भाव यहाँ उन शोभन कर्मों से है जिससे आत्मा की निहित शक्तियों का विकास हो और अभ्युदय के साथ-साथ निःश्रेयस की सिद्धि प्राप्त हो।

– शशिशेखर शुक्ल

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ॐ श्री गुरवे नमः

पहचान

- प्रो० विजय नाथ पाण्डेय, वाराणसी

जब श्रीकृष्ण मथुरा जाने लगे तो नन्द, यशोदा गोकुलवासी उनकी सुरक्षा के प्रति बहुत व्यग्र हो गये । यहाँ तक कि उनके परमभक्त ज्ञानी श्री अक्रूर जी भी चिंतित हो गये और उनकी सुरक्षा के लिए व्यग्र होकर उपाय सोचने लगे । उस समय राधा जी ने कहा कि प्रभु इतने असम्भव कार्य आपने किए; जैसे पूतना वध, वकासुर, कालिया नाग आदि का नाश, गोवर्धन पर्वत को धारण करना, इंद्र के क्रोध से गोकुल की रक्षा आदि । फिर भी लोग यह नहीं जान पाये कि आप स्वयं सबके रक्षक हैं, आप स्वयं ईश्वर हैं । तब कृष्ण जी ने कहा कि त्रेता युग में रामावतार में कितने लोगों ने उन्हें पहचाना-कुछ गिने-चुने लोग ही । उनमें महर्षि वशिष्ठ, विश्वामित्र, भक्त हनुमान, विभीषण और ऋणात्मक ढंग से रावण और भी कुछ लोग-उनकी संख्या बहुत नहीं थी । इस युग में भी अभी तक देखा-कंस के किसी भी योजना को सुनते ही लोग वेचैन हो उठते हैं जब कि मैंने पैदा होते ही अपना स्वरूप दिखा दिया था, मेरी ही प्रेरणा से वे मुझे यशोदा मां के पास ले गये। माता देवकी भी जानती है मैं उनका आठवा पुत्र हूँ जो कंस के विनाश के लिए पैदा हुआ हूँ, फिर भी विलाप और चिंता करती हैं । मेरे पृथ्वी पर से दुष्टों का नाश करके जाने पर भी मुझे पहचानने वालो की संख्या कुछ ही होगी । और युगों तक मुझे लोग याद करेंगे पर पूर्ण विश्वास के साथ नहीं।

ऊपर की बातों को जानने के बाद जब मैं अपने प्रभु (गुरुदेव जी) को देखता हूँ तो सोचता हूँ हममें से कुछ ही लोग उन्हें पहचान पाये; कुछ पहचाने भी तो विश्वास की कमी के कारण दूर हो गये । वे अभी भी हम सबके आसपास या दिल में हैं । नये भक्त मां में ही उनका स्वरूप देख सकते हैं- यह एक प्रार्थना है, इसे उपदेश नहीं, निवेदन मानियेगा ।

यह प्रसंग प्रभु को समर्पित करता हूँ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

श्री गणेश जी सदा सहाय

– श्री ओमप्रकाश केजरी वाल

ॐ आनन्द आनन्द आनन्द ॐ

ॐ गुरुदेव गुरुदेव गुरुदेव ॐ ।

श्री गुरुदेव की कृपा से मैं आप बीती घटनाओं का संक्षिप्त विवरण उपस्थित करता हूँ ।

ई० 1967 में सिवान स्टेशन पर मेरा कोयला का डिपू था । उस समय मेरी आर्थिक दशा दयनीय थी, कहने लायक नहीं । परिवार का व्यय मेरे माथे था । परिवार में कुल 9 (नौ) जने थे – मैं, मेरी पत्नी, चार पुत्र, दो पुत्री एवं वृद्ध पिताजी । संध्या लगभग 6-7 बजे मैं डिपू पर बैठकर अपने माला पर जप कर रहा था । मैं निःसहाय था । मेरी आँखों से अविरल अश्रु प्रवाह हो रहा था । उसी समय एक सज्जन दो-तीन व्यक्तियों के साथ पधारे जिनमें एक केदार जी को मैं जानता था जो श्री महेन्द्र जी के बड़े पुत्र थे । उस सज्जन श्रेष्ठ पुरुष ने कहा कि माला सुमिरन पर पहुँच जाय तो हमसे बात करो । फिर उन्होंने अपने दोनों हाथ मेरे मस्तक पर रखा और कहा कि माँ तुम्हें रास्ता दिखा रही है । माला सुमरन पर पहुँच चुका था । उन्होंने मेरा नाम पूछा और कहा – कोयला तुम्हारा है ? मैंने हाँ बतलाया । उन्होंने मुझसे कहा- ओमप्रकाश ! आज मैं बनारस जा रहा हूँ, परसों लौटूंगा । तुम आश्रम पर आना । उन्हीं लोगों ने बतलाया कि भक्ति-योगाश्रम पंचमन्दिर या डी.ए.वी. हाई स्कूल से सटे पश्चिम में है । मैं दो दिन बाद आश्रम गया, श्री गुरुदेव जी अभी नहीं आए थे । तीसरे दिन आश्रम गया । मेरा नाम-स्थान आदि पूछकर अन्दर भेजा गया । परम पूज्य श्री गुरुदेव जी लाल मखमली तोशक पर स्वयं विराजमान थे । मुझे एक कुर्सी बैठने को दी गई ।

उस दिन कोयला डिपू पर तुम्हीं थे ?

वार्तालाप आरम्भ हुआ । बाद में मुझें पद्मासन बतलाया गया । मंत्र

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2
जप की संख्या बढ़ाने का आदेश मिला ।

मैं अपना अभाव प्रकट करना चाहता था । सरकार ने कहा - फिर कभी होगा, अब तुम जाओ । इस प्रकार मेरा आश्रम पर आना-जाना शुरु हो गया । उन दिनों गुरु-भाइयों की लम्बी भीड़ लगती थी । लोग तरह-तरह के प्रसाद लाते थे । तीन-चार महीनों बाद मैं थोड़ा बादाम प्रसाद ले गया । प्रभु ने कहा - क्या लाए हो, बादाम ? मेरी आँखों में आँसू आ गये । प्रभु ने कहा- आओ, और मेरे सिर पर अपना हाथ घुमाया । अब कुछ दिनों बाद तो मुझे कभी श्री गुरुदेव जी का, कभी कृष्ण भगवान या अन्य देवताओं के भी दर्शन प्राप्त होते । एक दिन अपने निवास पर 1 बजे दिन चिन्ताग्रस्त सोया हुआ था । तभी चार भुजाधारी भगवान विष्णु के दर्शन प्राप्त हुए । मैं जगा और तुरत कुछ प्रसाद लेकर आश्रम पहुँचा । प्रसाद सरकार के पास रख दिया । सभी चिन्ताएं दूर । मैं बहुत खुश था । सरकार ने कहा कि तुम खुश हो । मैंने कहा कि भगवान के दर्शन मिले हैं । आश्रम लाइब्रेरी में एक कतार में राधा, कृष्ण, लक्ष्मीजी, विष्णु भगवान, सीता जी, राम जी, लक्ष्मण जी, भरत जी, शत्रुघ्न जी की मूत्तियाँ रखी थीं । सरकार ने कहा - जाकर देखो वहाँ कौन हैं ? मैंने लौटकर बताया कि यही विष्णु भगवान हैं जिन्होंने दर्शन दिया । प्रसाद लेकर मैं सानन्द घर गया ।

एक दूसरी घटना है जब मैंने अनुभव किया कि सूक्ष्म शरीर से श्री गुरुदेव जी आए, मेरा हाथ पकड़ा आकाश मार्ग से ऊपर ले गये और फिर वहाँ से क्षीर सागर पर हमलोग उतरे । हाथ पकड़े मैंने क्षीर सागर में प्रवेश किया । मैं तैरना नहीं जानता था, मुँह तक पानी आ गया । अब मैं डूब गया । तब तक देखता हूँ कि सरकार शयन में हैं और मैं सेवा कर रहा हूँ । गुरुदेव जी ने मुझे घर जाने को कहा । कुछ और भी कहा जो लिखना उचित नहीं है ।

सरकार के सानिध्य में आने के बाद बराबर ही कुछ घटनाएं घटती रहती थीं जिसमें प्रभु मुझसे सेवा लेकर हमारे अन्य परिवारिकों का भी महत् कल्याण किया करते थे । मैं और मेरी पत्नी अच्छी तरह जानती हैं कि कैसे

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2
मेरी पत्नी की मामी जो भारपाररानी में मरणार न थीं, श्री गुरुदेव जी ने हमें और मेरी पत्नी को आश्रम में रखकर सेवा क कर उनकी जान बचायी, उन्हें स्वस्थ किया और तब हमें वहाँ भेजा।

वस्तुतः हमलोगों को श्री गुरुदेव के सिवा कोई था ही नहीं। हर प्रकार से हम निःसहाय थे। सरकार भी जानते थे कि मेरे सिवा इसका कोई नहीं।

सरकार ने एक बार कहा था - ोग मेरी खोज करके मेरे पास आते हैं। लेकिन माँ ने मुझे इसके पास भेजा।

माँ ने मुझसे कहा - मेरा अमुक भक्त कष्ट में है, जाकर उसे देखो। माँ के कहने पर मैंने इसकी खोज की और इसके पास गया। तब यह स्टेशन पर कोयला डिपू पर रहता था। मुझे सरकार पर विश्वास था मेरे पास कुछ भी नहीं था।

एकबार स्वप्न में मैंने देखा था कि मुझें मृत्यु शय्या पर लिटाया गया है। परिवार में रोना-धोना शुरू है। बाँस की अर्थी पर मुझे श्मशान घाट लाया गया है। लकड़ी की चिता सजी और मुझे लिटाया गया। चिता में आग लगाई गयी। आग ने जोर पकड़ा। घबराहट में मंत्र का उच्चारण होने लगा। मैं जल रहा हूँ किन्तु किसी प्रकार की तकलीफ नहीं और मेरा सूक्ष्म शरीर आकाश मार्ग से जा रहा है।

आँखे खुल गयीं। सुबह सीधे श्री गुरुदेव जी के पास गया और कहा - मैं कुछ कहना चाहता हूँ। "जाओ भगवान के सामने बैठकर जप करो" आदेश मिला। 4 घंटे जप में रहने के बाद गुरुदेव ने बुलाकर प्रणाम करवाया। मैंने स्वप्न की घटना कह सुनायी। प्रभु ने कहा "तुम्हारी आयु बढ़ायी गयी है। मैं सृष्टि के कण-कण में व्याप्त हूँ। तुम्हारी रक्षा की गयी है।"

ऐसा गुरु कहाँ है ? बड़े भाग्य से ऐसा गुरु पाया। ॐ आनन्द आनन्द आनन्द ॐ। ॐ गुरुदेव गुरुदेव गुरुदेव ॐ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

॥ गुटखा ॥

– पुरुषोत्तम कुमार झा से प्राप्त ।

मात्र एक गुटखा आदमी की अर्थी उठवा देता है ।
खाने वाले को विभिन्न रोगों की लहर लगा देता है ॥

गांव-गांव और गली-गली फैल गया इसका लहर ।
सर्वाधिक बिकने वाला संसार का स्वादिष्ट जहर ॥

धूम मचा दे, रंग जमा दे, जीते जी अर्थी उठवा दे ।
जिन्दों की अर्थी उठवाये, फिर भी बुद्धू गुटखा खाये ॥

अक्ल का अंधा खाने वाला, जहर खरीदकर खाता जाये ।
गांठ को पूरा ठगने वाला, जहर बेचकर माल कमाये ॥

तलब-यमराज, पराग, पठान एक हजार है इनके नाम ।
जिसमें जितना जहर घुला है उसके उतने ही कम दाम ॥

हंसकर कहता गुटखा सबसे, जितना मैं सर्वव्यापी हूँ ।
हे मूर्ख ! खाने वालों, यमराज की कार्बन कापी हूँ ॥

हे सेहत के सर्वस नाशी, हे नशा के श्रेष्ठ विमान ।
मुख-कैंसर के मूल स्रोत, देश को बना दिया पिकदान ॥

महंगा नहीं तुम सस्ता खाओ, दस खाते हो चौबीश खाओ ।
शार्टकट रास्ता अपनाओ, अपनी अर्थी स्वयं उठाओ ॥

● ● ●

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

भजन

- श्री आनन्द

हृदय में रखा था यही नाम रावन
किया हाथ में था जगत लोक रावन ।
अमर बस हुए थे कहो मंत्र का जय ।
मृत्युञ्जय, मृत्युञ्जय, मृत्युञ्जय, मृत्युञ्जय ।।

नन्दीगण जपा था इसी मंत्र को ही
निवारित हुआ वह इसी मंत्र से ही ।
यही मंत्र था पार्वती प्रेम का जय ।
मृत्युञ्जय, मृत्युञ्जय, मृत्युञ्जय, मृत्युञ्जय ।।

...न्यु मुनि ने किया था इसी का
सदा मंत्र का जप यही बल ऋषि का ।
पयोदधि किया था इसी से बोलो जय ।
मृत्युञ्जय, मृत्युञ्जय, मृत्युञ्जय, मृत्युञ्जय ।।

श्री मार्कण्डे–लोमश इसी को जपे थे ।
इसी मंत्र को वे हृदय में रखे थे ।
मृत्युञ्जय हुए वे यही है मृत्युञ्जय ।
मृत्युञ्जय, मृत्युञ्जय, मृत्युञ्जय, मृत्युञ्जय ।।

इसी मंत्र को जप बने विश्वधाता
विधाता बने विश्व के सर्व त्राता ।
बोलो नेह से बस इसी मंत्र का जय ।।
मृत्युञ्जय, मृत्युञ्जय, मृत्युञ्जय, मृत्युञ्जय ।।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सदा पालते विष्णु सृष्टि इसी से
महीं धारते शेष भी हैं इसी से ।
मुनि सिद्ध होते इसी से मृत्युञ्जय ।
मृत्युञ्जय, मृत्युञ्जय, मृत्युञ्जय, मृत्युञ्जय ॥

शुकादि मुनि ज्ञानी हो गये यही वह
धनादिप हुए सुर इसी मंत्र का सह ।
यही प्राण जग का, कहो प्रेम से जय ।
मृत्युञ्जय, मृत्युञ्जय, मृत्युञ्जय, मृत्युञ्जय ॥

सदा भक्त पंक्ति इसी बल से सोती
चतुर्वर्ग प्राप्ति इसी से ही होती ।
गुरुदेव कहलो जरा प्रेम से जय ।
मृत्युञ्जय, मृत्युञ्जय, मृत्युञ्जय, मृत्युञ्जय ॥

श्री गुरुदेव जी के ग्राम गृह ''कौवाहाँ'' से प्राप्त पाण्डुलिपि से ।

संकलयिता – श्रीमती वीणा देवी ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

ajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgao

RNI No. : BIHHIN04897/04/1/2009 TC
CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

श्री रामानन्द भक्तियोगाश्रम द्वारा प्रकाशित कुछ रचनायें

1.	जीवन दर्शन	5.00
2.	विरह-वेदना	5.00
3.	ईश्वावस्योपनिषद् (हिन्दी भाष्य)	5.00
4.	आनन्द शतक (सौ उपदेश)	1.00
5.	मानव जीवन और साधना तत्व (दस आध्यात्मिक प्रवचन)	10.00
6.	पनघट पर छलकत गागरिया (बाईस कहानियाँ)	10.00
7.	सुन्दर जीवन (सौ उपदेश)	1.00
8.	अमृत मंथन (सौ उपदेश)	1.00
9.	केनोपनिषद् (हिन्दी भाष्य)	5.00
10.	भक्ति योग (नव आध्यात्मिक प्रवचन)	8.00
11.	सत्संग सुधा-सार (वार्षिक सत्संग कें चुने हुये उपदेश)	2.00
12.	आनन्द की लहरें (वार्षिक सत्संग के चुने हुये उपदेश)	2.00
13.	चौबिस सत्संग और दिव्य-जन्म कर्म	15.00
14.	त्रिधारा (द्वितीय संक्षिप्त संस्करण सौ गीत)	5.00
15.	प्रेम पथ (गीत संग्रह)	7.00
16.	अद्भुत कहानियाँ (25 सरस कहानियों का संग्रह)	15.00
17.	श्रद्धा कथा (आध्यात्मिक कहानियाँ)	7.00
18.	त्रिधारा संग्रह (प्रथम)	25.00
19.	त्रिधारा संग्रह (द्वितीय)	25.00
20.	त्रिधारा संग्रह (तृतीय)	25.00
21.	तीन अद्भुत प्रवचन	5.00
22.	पत्राचार-संग्रह	1.00
23.	देवी गीता (हिन्दी भाष्य सानुवाद तात्पर्य विशेष वक्तव्य सहित)	35.00
24.	गुप्त रहस्य (आध्यात्मिक कथा)	7.00
25.	अद्भुत तीन प्रवचन	3.00
26.	प्रवचन मंत्रावली	4.00
27.	दर्शन कथा	10.00
28.	विचार-विमर्श	5.00
29.	आनन्द सत्सङ्ग सुधा	12.00
30.	गुर्वर्चन पद्धति	45.00
31.	रामानन्द लहरी	6.50
32.	उपासना शास्त्र	50.00

पुस्तक मिलने का पता

श्री साधना साहित्य पुस्तक माला

श्री रामानन्द भक्तियोगाश्रम, आनन्द नगर, आनन्द रोड, सिवान (बिहार) भारत

RajGuru Math Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.